१

नाटक: अर्थ, परिभाषा, स्वरूप एवं विकास

इकाई की रूपरेखा

१.० इकाई का उद्देश्य
१.१ प्रस्तावना
१.२ नाटक का अर्थ
१.३ नाटक की परिभाषा
१.४ नाटक का स्वरुप
१.५ नाटक का विकास
१.६ सारांश
१.७ लघुत्तरीय प्रश्न
१.८ दीर्घोत्तरी प्रश्न
१.९ संदर्भ ग्रंथ

१.० इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय में निम्नलिखित बिंदुओं का छात्र अध्ययन करेंगे।

- नाटक के अर्थ को समझने हेतु।
- नाटक की परिभाषा को समझने हेतु।
- नाटक के स्वरूप एवं विकास को समझने हेतु।

१.१ प्रस्तावना

रंगमंच पर अभिनय कि जा सकने योग्य रचना नाटक कहलाती है। नाटक की पूर्ण सफलता पात्रों की सजीवता पर निर्भर करती है। नाटक के विभिन्न तत्वों में कथावस्तु, पात्र, संवाद, देशकाल एवं वातावरण, भाषा शैली आदि को शामिल किया जाता है। भारतीय नाटकों में नायक कथा को कल की ओर ले जाता है। दर्शक उसी के विकास-उत्थान में रुचि रखते हैं। जबकि पाश्चात्य नाटकों में नायक परिस्थितियों के चक्र में घूमता रहता है।

१.२ नाटक का अर्थ

नाटक की परंपरा बहुत प्राचीन है। नाटक अपने जन्म से ही शब्द की कला के साथ-साथ अभिनय की कला भी है। अभिनय रंगमंच पर होता है। रंगमंच पर नाटक के प्रस्तुतीकरण के लिए लेखक के शब्दों के अलावा निर्देशक, अभिनेता, मंच व्यवस्थापक और प्रेक्षक (दर्शक)

munotes.in

की आवश्यकता होती है। नाटक के शब्दों के साथ जब इन सबका सहयोग घटित होता है तब नाट्यानुभूति या रंगानुभूति पैदा होती है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है "बहुत पहले भारतवर्ष में जो नाटक खेले जाते थे उनमें बातचीत नहीं हुआ करती थी। वे केवल नाना अभिनयों के रूप में अभिनीत होते थे। अब भी संस्कृत के पुराने नाटकों में इस प्रथा का भग्नावशेष प्राप्य है।" यह इस बात का सबूत बताया जाता है कि नाटकों में बातचीत उतनी महत्वपूर्ण वस्तु नहीं मानी जाती थी, जितनी क्रिया। नाटक की पोथी में जो कुछ छपा होता है उसकी अपेक्षा वही बात ज्यादा महत्वपूर्ण होती है, जो छपी नहीं होती और सिर्फ रंगभूमि में ही देखी जा सकती है। नाटक का सबसे प्रधान अंग उसका क्रिया प्रधान दृश्यांश ही होता है, और इसीलिए पुराने शास्त्रकार नाटक को दृश्य काव्य कह गए हैं। इससे यह बात सिद्ध होती है कि कविता और कथा साहित्य की भांति नाटक के शब्द स्वतंत्र नहीं होते। नाटक के शब्दों का प्रधान कर्तव्य क्रिया प्रधान दृश्यों की प्रस्तावना है।

नाटक अभिनय के लिए होता है, पढ़ने के लिए नहीं। इसलिए नाटक के शब्दों में अर्थ उस प्रकार नहीं घटित होता जैसे कविता, उपन्यास या कहानी में। नाटक के शब्द कार्य की योग्यता से सार्थक होते हैं। नाटक के शब्दों में निहित कार्य की योग्यता रंगमंच पर सिद्ध होती है। इसलिए नाटक अनुष्ठान धर्मी होता है। अनुष्ठान का तात्पर्य यहां यह है कि उसके लिए कुछ नियमों के अनुसार तैयारी करनी पड़ती है। जैसे रंगमंच की व्यवस्था, वेशभूषा, प्रकाश, अभिनेताओं के क्रिया व्यापार, मुद्राएं, गति रचना आदि। नाटक के शब्दों को जब इन सारे व्यापारों में धारण कर लिया जाता है, तब रसानुभूति होती है। आधुनिक युग में इसे रंगानुभूति कहा जाता है, काव्य की अनुभूति से नाटक की रंगानुभूति इस अनुष्ठान व्यापार के कारण भिन्न होती है।

नाटक के अनुष्ठान धर्मी होने के कारण उपन्यास के मुकाबले नाटक की कुछ सीमाएं होती है। उपन्यासकार की भांति नाटककार को वर्णन और चित्रण की स्वतंत्रता नहीं होती। किसी पात्र के जीवन या घटना के विषय में उसे अपनी ओर से कुछ भी कहने का अवसर नहीं होता। दर्शकों के सामने कुछ घंटों में उसे पूरा नाटक प्रदर्शित करना होता है। इसलिए उसका आकार और विस्तार बहुत नहीं हो सकता। इन सब कारणों से नाटक उपन्यास के मुकाबले अधिक ठोस तथा जटिल होता है। नाटकों में अधिक संयम और कौशल की जरूरत होती है। रंगमंच और अभिनय की उपेक्षा के कारण नाटककार घटना, पात्र और संवाद को अत्यंत सावधानी से चुनता है। इस चुनाव और उनके विन्यास में नाटककार को अतिरिक्त संयम और कौशल का उपयोग करना पड़ता है। घटना, पात्र और क्रिया को वह ऐसे संवादों के जरिए प्रस्तुत करता है, जो अभिनय में ही अपना पूरा अर्थ और प्रभाव प्राप्त कर सकते हैं। नाटक के मुख्यतः दो रूप होते हैं, एक है श्रव्य नाटक, दूसरा है दृश्य नाटक। इसमें श्रेष्ठ रूप है दृश्य नाटक। नाटक की प्रमुख तीन कसौटियाँ है - मंचीयता, अभिनेता और दृश्यात्मकता। नाट्य समीक्षकों एवं विद्वानों द्वारा इन दो प्रकारों पर नाटक के अर्थ संबंधी अलग-अलग मत प्रस्तुत किए गए हैं। कोई चिंतक निर्देशक या अभिनेता को ही नाटक कहते हैं। दर्शक वर्ग तो इसमें महत्वपूर्ण होता है। सामान्य बोलचाल की भाषा में 'नाटक करना' एक अर्थापकर्षण का वाचक है, और साहित्य संस्कृति के पारिभाषिक रूप में

वह भारत में सर्वाधिक पूज्य वेद के समकक्ष देखा जाता है। नाट्यशास्त्र में उसे 'पंचम वेद' कहा गया है।

१.३ नाटक की परिभाषा

नाटक एक ऐसी विधि है जिसमें सभी शास्त्रों और शिल्पों के दर्शन पाए जाते हैं, नाटक मानव मन की अंतर चेतना का अभिनयात्मक रूप है । अतः भाषा के माध्यम से हर्ष, उल्हास, दुख आदि भावनाओं को प्रकट करना नाटक की विशेषता है । नाटककार व्यक्तिवादी भूमिका लेकर नाटक का निर्माण नहीं करता, क्योंकि नाटक सामूहिक कृति होती है । नाटक में सामूहिक आस्वाद एवं सामूहिक अनुरूपता अपेक्षित होती है । नाटक का नायक व्यक्तिगत जीवन प्रकट नहीं करता, वह तो समाज का प्रतिनिधित्व करता है। दर्शक पल भर के लिए खुद को भूल कर नाटक के पात्रों के साथ एक रूप होते हैं, और यही नाटक का सत्य है, इसी बात को स्पष्ट करने के लिए अलग-अलग विद्वानों ने भिन्न भिन्न प्रकार से अपने विचार व्यक्त किए हैं।

भरत मुनि ने नाटक की परिभाषा इस प्रकार दी है - "सब अंगों, उपांगों और गतियों का क्रम व्यवस्थित करके उसका अभिनय किया जाता है और दर्शकों तक पहुंचाया जाता है, उसे नाटक कहते हैं।" भरत मुनि ने अनुकरण को महत्व दिया है।

आचार्य विश्वनाथ ने अपने 'साहित्य दर्पण' में नाटक की परिभाषा इस प्रकार दी है "अंगिक, वाचिक, आहार्य और सात्विक भाव का अनुकरण नाटक है।"

'धनंजय' ने नाटक की परिभाषा इस तरह से रेखांकित की है - "किसी की स्थिति विशेष का अनुकरण नाट्य या अभिनय कहलाता है । रूपक, नाटक या दृश्यकाव्य में नाट्य या अभिनय का प्रधान स्थान होता है। दृश्य काव्य के भीतर काव्यवस्तु, चरित्र तथा दृश्यों का इसी प्रकार से संगठन होता है, जिन्हें रंगमंच पर दिखाया जा सकता है।

भरतमुनि ने नाटक की परिभाषा का इस प्रकार विस्तृत विवेचन किया है - "नाटक को संपूर्ण लोक का भावानुकीर्तन माना जाता है। इसमें धर्म, अर्थ, काम, ज्ञान, शांति, हास्य, खेल, युद्ध, धार्मिको की धर्मप्रवृत्ति, कामियों की वासना, दुराचारियों की निग्रह, वलियों की दृष्टता, शूरो का उत्साह, मूर्खों की मूर्खता, विद्वानों की विद्वत्ता, धनिको का विलास, दुखियों के प्रति धैर्य, व्यवसायियों का व्यवसाय आदि सम्पूर्ण मानव क्रियाओं का अनुकीर्तन भावों के आवेग में किया जाता है, उसे नाटक कहते है।" इस प्रकार नाटक मानव की समस्त भाव - योजनाओं का अनुकरण मात्र है। यह अनुकरण चार प्रकार का है - १. अंगिक, २. वाचिक, ३. आहार्य, ४. सात्विक । काव्यशास्त्र मनीषी डॉ. भगीरथ मिश्र जी ने नाटक को अनुकरण माना है। उन्होंने स्पष्ट किया है कि "किसी स्थिति विशेष का अनुकरण नाट्य या अभिनय कहलाता है।"

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने नाटक को परिभाषित करते हुए कहा है कि "काव्य में वर्णित जो धीरोदात्त आदि नायको की अवस्थाएं है, उनके अनुकरण के द्वारा चार प्रकार के अभिनयो से ऐसा अनुकरण है, जो राम, दुष्यंत आदि पात्रों को ज्यों का त्यों उपस्थित करा

सके उसे नाट्य कहते है।" भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र के अनुसार - "काव्य का सर्वगुण सम्पन्न प्रदर्शन ही नाटक है।"

बाबू गुलाबराय के अनुसार - "नाटक का संबंध नट से है। अवस्थाओ की अनुभूति को नाट्य कहते है। इसमें नाटक शब्द की सार्थकता है।"

डॉ. नगेंद्र ने नाटक को परिभाषित करते हुए कहा है "नाटक एक दृश्यकाव्य है, जिसमे मानव जीवन की उदारता को उदात्त चरित्रों और अभिनय के माध्यम से उद्घाटित किया जाता है।"

सार यह है कि नाटक में मानव जीवन के अनुकरण और अभिनय की क्रिया का महत्त्वपूर्ण स्थान है, अर्थात अनुकरण ही नाटक है।

भारतीय विद्वानों की परिभाषाओ की तरह पाश्चात्य विद्वानों ने नाटक को 'ड्रामा' नाम दिया है। अरस्तु ने नाटक को 'ट्रेजेडी' कहा है। जीवन के व्यापारों का अनुकरण माना है। अरस्तू ने नाटक की परिभाषा इस प्रकार से दी है - "ट्रेजडी में जीवन व्यापारों का अनुकरण है, इन व्यापारों में गंभीरता की और पूर्णता की आवश्यकता होती है। ट्रेजडी में कलात्मक तथा अलंकारिक भाषा, विषमताएँ वर्णनात्मक शैली के स्थान पर दृश्यात्मक शैली होती है। करुणा और भय के प्रदर्शन द्वारा मनोविकारों के परिष्करण आदि आवश्यक होते हैं।" काव्यशास्त्र में आनन्द लेने वाले मिन्टन विद्वान का नाम आता है "नाटक द्वारा रंगमंच पर वार्तालाप के रूप में जीवन का अनुकरण कहा है।"

ब्रेन्डर मैथूज ने "नाटक को रंगमंच पर जीवंत अभिनेताओं के द्वारा सामाजिकों के सम्मुख जीवंत रूप में प्रस्तुत की गई कहानी कहा है।"

इस प्रकार प्रस्तुत नाट्य विषयक परिभाषाओ का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि नाटकों की निर्मिति वेदो से हुई अर्थात नाट्य का बीजवपन वेदो में प्राप्त है। वस्तुतः नाटक किसी एक दिन की परिणीति न होकर अनेक वर्षों के विकास की गुणात्मक परिणीति है।

१.४ नाटक का स्वरुप

नाटक मूलतः काव्य का ही एक प्रकार है, तथा साहित्य और काव्य नाटक के मूल स्वभाव के अंश है। इसका तात्पर्य यह है कि नाटक के स्वरुप को साहित्य के स्वरुप से अलग नहीं देखा जा सकता। अधिक से अधिक उसे विशिष्ट साहित्यिक स्वरुप कहा जा सकता है। साहित्य को मनुष्य पढ़ता है। नाटक के लिए भी यही सच है कि साहित्य में शब्दों द्वारा मानव के जीवन को स्पष्ट किया जाता है। नाटक एक भाषिक कला है। हिंदी नाट्य साहित्य की परंपरा का आरंभ आधुनिक काल (१९वीं शताब्दी) से हुआ है। हिंदी से पूर्व संस्कृत और प्राकृत की समृध्द नाट्य परंपरा थी। लेकिन हिंदी नाटकों का विकास आधुनिक युग में ही संभव हो सका। इसका कारण शायद यह था कि संस्कृत नाटकों के युग के बाद हिंदी क्षेत्र में रंगमंच की परंपरा सिलसिलेवार ढंग से कायम नहीं रह सकी थी। परिणामतः नाट्य लेखन की परंपरा का विकास भी न हो सका।

munotes.in

मध्यकाल में लीलाओ, रासलीला, रामलीला, नौटंकी आदि का उदय होने से जन - नाटकों का प्रचलन बढ़ा। इन जन - नाटकों या लीलाओ में गीत और नृत्य की अधिकता रहती थी और गद्य का बहुत कम प्रयोग होता था। बीच - बीच में किसी एक व्यक्ति द्वारा पात्र-परिचय दिया जाता था। कथा को आगे बढ़ाने के लिए यथावश्यक वर्णन भी चलता था। लोक नाटक जन - समूह के मनोरंजन प्रमुख साधन थे।

आधुनिक काल से पूर्व सत्रहवीं - अठारवी शताब्दी के आस-पास के कुछ ऐसे नाटक भी उपलब्ध है, जो ब्रजभाषा में रचित है। ये नाटक दो प्रकार के है १) मौलिक और २) अनूदित। मौलिक नाटकों में प्राणचंद चौहान का 'रामायण महानाटक', 'कृष्ण जीवन' लच्छीराम का 'करुणाभरण', उदय कवि का 'हनुमान नाटक', महाराज विश्वनाथ सिंह का 'आनंद रघुनन्दन' और गोपालचंद्र गिरधरदास का नाटक 'नहुष' है। इनमे 'आनंद रघुनन्दन' (१७०० ई.) नाटक गद्य-पद्य मिश्रित ब्रजभाषा में है। यह हिंदी नाटक साहित्य का प्रथम मौलिक नाटक माना जाता है। इसके अंतर्गत राम का सम्पूर्ण जीवन संक्षेप में चित्रित है। कथोपकथन, रंगसंकेत, अंक विभाजन आदि प्रयोग के कारण रामचंद्र शुक्ल ने 'आनन्द रघुनन्दन' को हिंदी का प्रथम मौलिक नाटक कहा है।

इन सभी ब्रजभाषा नाटकों पर संस्कृत नाट्य साहित्य की स्पष्ट छाप नजर आती है। संस्कृत नाटकों की तरह ही इनकी कथावस्तु का आधार धार्मिक-पौराणिक आख्यान है। इन आख्यानों की तरह ही - धार्मिक पौराणिक गाथाओ में श्रृंगारिक भावना का प्रयोग इस युग की मूल मनोवृत्ति प्रतीत होती है। भले ही आज की दृष्टि से ब्रजभाषा नाटक 'नाट्य' की सभी अंगों और रीतियों को पूरा न करते हों, किन्तु वे हिंदी नाटक का 'पूर्व रूप' अवश्य कहे जा सकते है। हिंदी साहित्य में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान यही है कि उनके द्वारा हिंदी साहित्यकारों के हृदय में नाटक को कलात्मक एवं विकसित स्वरुप देने की कामना निरंतर बनी रही। दूसरी ओर अनूदित नाटकों में मुख्यतः महाराज यशवंत सिंह द्वारा अनूदित 'प्रबोध चंद्रोदय', नेवाज कवि का 'शकुंतला नाटक' और सोमनाथ माथुर का 'माधव विनोद' इत्यादि है।

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में पारसी थियेट्रिकल कम्पनियाँ अस्तित्व में आ चुकी थी, और इनका प्रमुख उद्देश्य विभिन्न नाटकों द्वारा जनता का मनोरंजन करना था। इनके नाटकों के कथानक कभी रामायण-महाभारत से, कभी पारसी प्रेमकथाओ से और कभी अंग्रेजी नाटकों -'हेमलेट', 'रोमियो जूलिएट' आदि से लिए जाते थे। इनमें बचकाने नृत्य, स्थान-स्थान पर गीत, शेरो-शायरी, ग़ज़ल आदि का समावेश रहता था। ऐसा ही नाटक अमानत द्वारा लिखित 'इंदरसभा' (१८५३ ई.) है। इसकी भाषा हिंदी-उर्दू मिश्रित है। 'औपेरा' के समान इस नाटक का अधिकांश भाग गीतों से भरा पड़ा है। गीतों में ब्रजभाषा, अवधी और खड़ी बोली का प्रयोग हुआ है। बीच-बीच में संवादों का समावेश है, तथा पात्र रंगमंच पर आकर अपना परिचय स्वयं देता है। श्रेष्ठ कलात्मकता के भाव के बावजूद उस जमाने में यह नाटक बहुत लोकप्रिय हुआ, और हिंदी नाट्य जगत पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा है। ऐसे नाटकों द्वारा उत्पन्न और स्तरीय कला से विहीन असंस्कृत वातावरण से क्षुब्ध होकर उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में भारतेंदु ने हिंदी नाटक को साहित्यिक और कलात्मक रूप देने का प्रयास किया। उनके द्वारा स्थापित की गई नाटक और रंगमंच की परंपरा को जयशंकर प्रसाद ने नया स्वरुप, नई दिशा प्रदान की। साहित्य यदि मानवीय वृत्तियों के हृदय की

munotes.in

धड़कन है, तो नाटक उसका स्वरुप । साहित्य यदि उन्हें संस्कारित कर मानस में प्रस्थापित करता है तो नाटक उन्हें अवतरित कर मच उपस्थित करता है। इस प्रकार नाटक साहित्य का एक सक्रिय अंग है । साहित्य के विविध अंग जब एक साथ अपना स्वरुप प्रदर्शित करते है तो, वे नाटक का आश्रय ग्रहण करते है। इस प्रकार नाटक में कथा, काव्य, लेखादि अनेक विधाओं का ही नहीं अनेक कलाओ का भी प्रदर्शन एक साथ ही विभिन्न वृत्तियों के दर्शक देखते है। नाटक मानवीय साहित्यिक वृत्तियों की समस्त क्षमताओं से पूर्ण होता है । एक स्थान पर लिखा है - 'साहित्य यदि पुष्प है तो नाटक उसकी सुगन्धि है । साहित्य यदि धारा है तो नाटक लहर। साहित्य की जो वृत्तियों एकांत, सीमित, अविख्यात रहती है, वे नाटक के द्वारा सर्वसुलभ, असीमित और विश्वविख्यात हो जाती है। शरीर और प्राण के समान ही साहित्य और नाटक का संबंध है। नाटक साहित्य की अत्यंत श्रेष्ठ कला है। नाट्य कला चक्षुग्राह्य है, इसका अनुभव और संवेदन हमारी इंद्रियों के द्वारा होता है।

भारत में नाटक की उत्पत्ति और उसके अभिनय आदि के विषय में सबसे प्राचीन ग्रंथ 'नाट्यशास्त्र' माना जाता है । आचार्य भरतमुनि ने 'नाट्यशास्त्र' में नाटक विधा में सबसे प्राचीन ग्रंथ 'नाट्य' विधा की चर्चा की है। 'नाट्य' के लिए कहीं 'रूपक' का भी प्रयोग हुआ है- अर्थात 'रूप का आरोप', परन्तु आज इन दोनों स्थान पर नाटक शब्द का प्रयोग प्रचलित हुआ है। नाटक की उत्पत्ति के विषय में विद्वानों ने सिद्धांत बनाये और विचार व्यक्त किये है, कि यह विधा प्राचीन है, परन्तु यह 'शुद्ध भारतीय परंपरा' है, या इस पर पश्चिमी प्रभाव है, यह अपने आप में शोध का विषय है।

१.५ नाटक का विकास

'नाट्यशास्त्र' में भरतमुनि नाटक के बारे में कहते हैं कि - "एक बार वैवस्वत मनु के दूसरे युग में लोग बहुत दुखी हुए। इस पर इंद्र तथा अन्य देवताओं ने जाकर ब्रह्मा जी से प्रार्थना की कि आप मनो-विनोद का कोई ऐसा साधन उत्पन्न कीजिए, जिससे सबका रंजन हो सके।" इस पर ब्रह्मा जी ने चार वेदों को बुलाया और उनकी सहायता से 'पंचम वेद' नाटक की रचना की। भारतीय और पाश्चात्य दृष्टिकोण से 'कव्येशु नाटकं रम्यं' के अनुसार साहित्य की सबसे सुंदर एवं महत्वपूर्ण विधा नाटक है। मानव सृष्टि के आरंभ से ही नाटक का बीज निर्माण हुआ है। सभी देशों में सभ्यता के प्रारंभिक काल से ही 'नाटक' का किसी न किसी रूप में प्रचलन रहा है। नाटक के उद्गम के विषय में विभिन्न विद्वानों ने भिन्न-भिन्न विचार प्रकट किए हैं। भरत के अनुसार नाटक की व्युत्पत्ति 'त्रेता युग' के आरंभ में स्वर्ग में हुई। इंद्र तथा अन्य देवताओं की प्रार्थना पर ब्रह्मा ने ऋग्वेद से पाठ्य, सामवेद से गीत, यजुर्वेद से अभिनय और अथर्ववेद से रस लेकर सभी वर्णों के लिए उपयोगी तथा इतिहास युक्त 'पंचम नाट्यवेद' की रचना की। धनंजय नाटक के उत्पत्ति के संदर्भ में कहते हैं - "नाट्य वेद' में महादेव ने 'तांडव' तथा पार्वती ने 'लास्य नृत्य' का समावेश किया।" नंदीकेश्वर ने 'अभिनय दर्पण' के प्रारंभ में नाटक की उत्पत्ति के बारे में बताते हुए भरत का ही समर्थन किया है। 'शारदा तनय' में अपने ग्रंथ 'भावप्रकाशम' के दशम अधिकरण में संगीत की उत्पत्ति के प्रसंग में नाट्य वेद की उत्पत्ति के बारे में कहा है - "अत्यंत प्राचीन काल में ब्रह्मा ने एक मुनि और उनके पांच शिष्यों को नाट्य वेद सीख कर गीत और रसों में भरे हुए अनेक नाटक दिखाकर ब्रह्मा को प्रसन्न किया। ब्रह्मा ने उन्हें वरदान दिया। आप लोग तीनों लोगों में भरत कहलाएंगे और नाट्य वेद भी तुम्हारे ही नाम पर भरत कहलाएगा। आगे चलकर भक्तों ने मनु के साथ

भारतवर्ष में जाकर अयोध्या में अनेक नाटक खेले और नाट्यशास्त्र का प्रचार किया।" इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि नाट्य प्रयोग हमारे देश में अत्यंत प्राचीन काल से चला आया है। भारतीय नाट्य परंपरा की प्राचीनता के विषय में ऋग्वेद के संवादयुक्त 'महाव्रत स्तोम' के अवसर पर हुए नृत्यगान, यजुर्वेद में 'शैलूष' शब्द का अनेक बार प्रयोग तथा सामवेद का संगीत प्रधान होना, इसकी प्राचीन परंपरा की पुष्टि करते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि नाट्य कला का विकास प्राचीन काल में हो चुका था। सुरेंद्र वर्मा के अनुसार, "आगे चलकर मानव के उस प्राकृतिक नर्तन ने ताल और लय के साथ भाव को व्यक्त करने की शुरुआत की होगी।" इस प्रकार अभिनय, नृत्य, वाद्य, कथानक, चरित्र और संवादों के एकीकरण से 'नाटक' अस्तित्व में आया होगा। डॉ. रिजवे ने नाटक की व्युत्पत्ति 'वीरपूजा' से मानी है। कुछ पाश्चात्य विद्वानों ने नाटक की निर्मिति लोक नाट्यों से स्वीकार की है, जिनमे प्रो. कीनी और प्रो. विशल आदि प्रमुख है। पाश्चात्य विद्वानों ने 'अश्वघोष' को संस्कृत का प्रथम नाटककार घोषित किया है। संस्कृत के साहित्यिक नाटकों और जन नाटकों के संपर्क से ही हिंदी नाटकों का विकास आरंभ होता है। डॉ. दशरथ ओझा कहते है - "हिंदी नाटक की परंपरा के मूल स्त्रोत ये जन-नाटक ही है। जो स्वांग आदि के नाम से अपने प्राचीन रूप में, अब विद्यमान है। क्रमशः इन जन नाटकों ने विकसित होकर साहित्यिक रूप धारण किया।" वास्तव में हिंदी साहित्यिक नाटकों की उत्पत्ति आलोचकों ने सत्रहवीं शताब्दी से मानी है, लेकिन डॉ. ओझा उसको तेरहवी शताब्दी से मानते है। डॉ. ओझा का 'गया सुकुमार रास' जो हिंदी का पहला नाटक माना जाता है, उपर्युक्त अनेक प्रमाणों एवं मतों का अध्ययन करने के बाद यह कहा जा सकता है कि नाटक की निर्मिति दैव शक्ति द्वारा हुई है। प्रारंभ में नट एवं अवतारों के द्वारा यह लीलाएँ अभिव्यक्त की जाती थी। धीरे-धीरे यह जन सामान्य में प्रचलित हो गई। भरतमुनि के अनुसार 'लोकचित्त नाटक' की मूल प्रेरणा मनुष्य में ही होती है, क्योंकि नाटक लोक स्वभाव से ही निर्माण होता है। 'दशरूपक' में यह बात स्पष्ट है कि नाटक चाहे वेद या अध्यात्म से उत्पन्न हो, तो भी वह तभी सिद्ध होता है कि वह लोक सिद्ध है क्योंकि नाट्य-लोक स्वभाव से उत्पन्न होता है। इसलिए नाट्य प्रयोग में लोक ही सबसे बड़ा प्रमाण होता है। हिंदी नाटक के विकास क्रम को कुल चार युगों में बांटकर देखा जा सकता है - १) भारतेन्दु युग, २) द्विवेदी युग, ३) प्रसाद युग, ४) प्रसादोत्तर युग।

भारतेन्दु युग:

भारतेन्दु युग राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक नवजागरण के साथ-साथ प्राचीन और नवीन के संघर्ष का युग था। एक ओर प्राचीन संस्कृत नाटक परंपरा तो दूसरी ओर पाश्चात्य नाटकों का प्रभाव हिंदी नाटकों पर पड़ रहा था। इसी कारण इस युग में विषय और रूप-विधान दोनों दृष्टियों से दो प्रकार के नाटकों का निर्माण हुआ। एक प्रकार के नाटक प्राचीन प्रेम, भक्ति आदि विषयो पर संस्कृत शिल्प-विधान के आधार पर लिखे गए, तो दूसरे प्रकार के नाटक सामयिक विषयों को लेकर प्राचीन और नवीन नाट्य-शिल्प के मिश्रित रूप को लेकर लिखे गये। भारतेन्दु के दस मौलिक नाटकों में से 'सती प्रताप' 'सत्य हरिश्चंद्र' पौराणिक विषयों पर आधारित है। 'प्रेमजोगिनी' में सामाजिक समस्या को उठाया गया है। ऐतिहासिक विषय पर 'नीलदेवी' लिखा गया तो 'भारत दुर्दशा', 'भारत जननी' में राष्ट्र प्रेम का चित्रण हुआ है। 'वैदिकी हिंसा, हिंसा न भवति' और 'अंधेर नगरी' नाटकों में समाजगत कुसंगतियो का चित्रण हुआ है। 'विषस्य विषमौषधम' में अंग्रेजों के राज्य में भारत के तत्कालीन

राजाओं-नवाबों की दीन-दशा का व्यंग्यपूर्ण चित्रण कर देशभक्ति के स्वर को उठाया गया है। 'चन्द्रावली' में माधुर्य भाव की भक्ति-भावना का चित्रण हुआ है।

द्विवेदी युग:

भारतेन्दु युग के बाद और प्रसाद युग के प्रारम्भ के पहले के कलाखंड में अधिक मात्रा में नाटकों की रचना होने पर भी नाटकों की शैली या शिल्प में कोई खास परिवर्तन नहीं हुआ।

भारतेन्दु युग के नाटकों में जन-जीवन की जिस निकटता का परिचय मिलता है, वह द्विवेदी युग के नाटकों में नहीं। द्विवेदी जी के सामने उस समय हिंदी भाषा और साहित्य से संबंधित अनेक समस्याएँ थी। अतः द्विवेदी तथा उनके समकालीन सुधार का कार्य करते रहे। परिणाम यह हुआ कि, मौलिक नाटकों का सृजन अपेक्षाकृत कम हुआ। भारतेन्दु युग की अनुवाद परंपरा का क्रम इस युग में जारी रहा। इन नाटककारों ने पौराणिक, संत चरित्रों पर आधारित सामाजिक और प्रेमलीला पूर्ण नाटकों का सृजन और अनुवाद किया। शेक्सपीयर से प्रभावित 'आगा हश्र' के 'कलियुगी साधु' तथा जमुनादास मेहरा के 'पाप परिणाम' में हास्य-रस की सृष्टि हुई। बद्रीनाथ भट्ट के 'विवाह-विज्ञापन' तथा 'मिस-अमेरिका' नामक प्रहसनों में विषय की नवीनता दृष्टिगोचर होती है।

भारतेन्दु युग की अपेक्षा इस युग में ऐतिहासिक नाटक अधिक लिखे गये। जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी का 'तुलसीदास' 'मिश्र बन्धुओ का 'शिवाजी', प्रेमचंद का 'कर्बला' आदि नाटक उल्लेखनीय है।

इस काल के नाटककारों में नारायण प्रसाद 'बेताब, राधेश्याम, कथावाचक, आगा हश्र काश्मीरी, तुलसीदास शैदा, हरिकृष्ण जोहर, बद्रीनाथ भट्ट तथा जी. पी. श्रीवास्तव आदि प्रमुख है।

प्रसाद युग:

हिंदी नाटकों के विकास का जो आरम्भ भारतेन्दु युग में हुआ था, वह प्रसाद युग में अपने पूर्ण उत्कर्ष को पहुँचा। प्रसाद ने पहली बार हिंदी नाटक में पात्रों के अंतर्द्वंद्व का चित्रण कर, उन्हें स्वतंत्र व्यक्तित्व प्रदान किया। उन्होंने अपने नाटकों में पाश्चात्य तथा भारतीय नाट्य कला का सुंदर समन्वय स्थापित किया है।

प्रसाद के नाटकों की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि, उनके नाटक में न तो दुखांत है और न ही सुखांत बल्कि वे प्रसादान्त है। उनके नाटकों का नायक अंत में विजयी होने पर भी वैराग्य भावना से प्रभावित होता है। ऐसे वैशिष्ट्यपूर्ण अंत को 'प्रसादान्त' कहा जाता है।

प्रसादजी ने सन १९१० से लेकर १९३३ तक कुल १३ नाटकों की रचना की है। 'चन्द्रगुप्त', 'स्कंदगुप्त', 'विशाख', 'अजातशत्रु', 'राजश्री' इनके ऐतिहासिक नाटक है, तो 'ध्रुवस्वामिनी' ऐतिहासिक नाटक होते हुए भी समस्याप्रधान नाटक है। 'जनमेजय का नाग यज्ञ' पौराणिक नाटक है, तो 'सज्जन', 'कल्याणी-परिणय', 'प्रायश्चित', 'एक घूंट' और 'करुणालय' एकांकी नाटक है। 'करुणालय' हिंदी का पहला 'गीति नाटक' है, तो 'कामना' एक प्रतीकात्मक नाटक है।

प्रसाद के नाटकों पर प्रायः ये दोष लगाए जाते है कि, उनकी भाषा क्लिष्ट, शैली और काव्यमयता तथा दार्शनिकता के आधिक्य के कारण साधारण पाठक के लिए समझने में कठिन है, और अभिनय के योग्य नहीं है।

प्रसादोत्तर युग:

प्रसाद युग के विविध नाट्यरूपों का इस काल में विकास हुआ। साथ ही गीतिनाट्य, रेडियो नाटक के विकास के साथ-साथ इस काल में ऐतिहासिक, पौराणिक, समस्याप्रधान, सामाजिक और राजनैतिक नाटकों का निर्माण हुआ। इस काल के नाटककारों में हरिकृष्ण प्रेमी, उपेन्द्रनाथ अश्क, वृन्दावनलाल वर्मा, चतुरसेन शास्त्री, जगदीशचंद्र माथुर, विष्णु प्रभाकर आदि नाटककारों ने स्वतंत्र रूप से नाट्य रचना की। इस काल में राष्ट्रीय भावना के ऐतिहासिक नाटक लिखे गये तो नाटक में मध्यमवर्गीय समस्याओं का यथार्थ चित्रण पहली बार 'अश्क' के नाटकों में हुआ। आधुनिक युग सभी दृष्टियों से नवोन्मेष का युग है। इस युग में पाश्चात्य प्रभाव के कारण नाटक के अभिनय और रंगमंच की ओर अधिक ध्यान दिया जाने लगा। इस काल में ऐतिहासिक, पौराणिक, सामाजिक, नाटकों के साथ-साथ व्यक्तिगत समस्या प्रधान, सामाजिक समस्या प्रधान, गीतिनाटक, सिने नाटक, प्रतीक नाटक आदि सभी प्रकार के नाटक रचे जा रहे है। इन नाटकों में परिवारिक, आर्थिक, सामाजिक और जातिगत वर्गगत समस्याओं का भी चित्रण हो रहा है।

जयशंकर प्रसाद के समकालीन और परवर्ती नाटककार प्रसाद के ही नाट्यशास्त्रो को ग्रहण कर नाटकों का सृजन करते रहे। उदयशंकर भट्ट, सेठ गोविन्द दास, हरिकृष्ण प्रेमी, गोविन्द वल्लभ पंत, रामकुमार वर्मा आदि के नाटकों पर प्रसाद की नाट्य शैली का प्रभाव है। प्रसाद युग के बाद हिंदी नाटकों के नए युग का प्रारम्भ होता है। नाटक विषय और शिल्प दोनों दृष्टि से और भी अधिक विकसित हुए। यह युग कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। अब राष्ट्रीय स्वतंत्रता संघर्ष में किसान और मजदूर जनता भी शामिल हो गई थी। उनके संगठन बन चुके थे। जीवन में भावना की बजाय बुद्धि का महत्व अधिक हो गया था। आदर्श का स्थान यथार्थ ने ले लिया था। इस युग तक आते-आते रामलीला, नौटंकी आदि का प्रचार काफी कम हो गया। पारसी रंगमंचीय नाटक भी उतने अधिक लोकप्रिय नहीं रहे थे, क्योंकि सिनेमा का प्रभाव जनता पर अधिक पड़ रहा है। ऐतिहासिक नाटक इस काल में भी लिखे गए। राष्ट्रीय भावनाओं और चेतना को अधिक प्रश्रय दिया गया। पौराणिक नाटकों के प्रति जनरुचि कम होती गई, और अपने चारो ओर की समस्याओं, समसामयिक विषयो की ओर ध्यान आकृष्ट हुआ। विदेशी साहित्य का अध्ययन करने की प्रवृत्ति बढ़ रही थी। विशेषकर इब्सन, बनार्ड शॉ, ओनील आदि का अनुसरण किया जा रहा था। इन नाटककारों ने पश्चिमी नाटक के क्षेत्र में यथार्थवादी प्रवृत्ति का सूत्रपात किया था। इनके प्रभाव स्वरूप हिंदी नाट्य साहित्य में समस्या नाटकों का सूत्रपात हुआ। इसके प्रमुख प्रवर्तक लक्ष्मीनारायण मिश्र थे। मिश्र जी ने लेखन की शुरुआत प्रसाद के समय में ही कर दी थी। उनका नाटक 'संन्यासी' १९३६ में आया था। पश्चिम में नाटकों के माध्यम से इब्सन और बनार्ड शॉ ने प्रचलित परम्पराओं पर चोट कर बौद्धिक क्रांति का बीज बोया था, इस तरह साहित्य में आदर्श और भावना की अपेक्षा यथार्थ और बुद्धि तत्व का प्रवेश हुआ था। हिंदी में इस प्रवृत्ति का आरम्भ और बुद्धि तत्व का समावेश लक्ष्मीनारायण मिश्र की देन है।

munotes.in

१.६ सारांश

सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि नाटक विधा विषयक सैद्धांतिक विमर्श प्रस्तुत किया गया है। नाटक संकल्पना, अर्थ, स्वरुप, परिभाषा तथा नाटक के भारतीय तथा पाश्चात्य तत्वों में होने वाले अंतर को स्पष्ट किया गया है। नाट्य भेदों के विभिन्न बिंदुओं पर प्रकाश डाला गया है।

१.७ लघुत्तरीय प्रश्न

१. 'काव्य का सर्वगुण संपन्न प्रदर्शन ही नाटक है' किसने कहा है?

उ - भारतेंदु हरिश्चन्द्र।

२. मध्यवर्गीय समस्याओं का यथार्थ चित्रण पहली बार किसके नाटकों में हुआ?

उ - उपेन्द्रनाथ अश्क।

३. हरिकृष्ण प्रेमी किस युग के नाटककार हैं?

उ - प्रसादोत्तर युग।

४. समस्या नाटकों के प्रवर्तक कौन थे?

उ - लक्ष्मीनाराण मिश्र।

५. जयशंकर प्रसाद ने कुल कितने नाटकों की रचना की है?

उ - तेरह।

१.८ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१. नाटक के अर्थ को स्पष्ट कीजिए।

२. नाटक की परिभाषा बताते हुए उसके तत्वों पर प्रकाश डालिए।

३. नाटक के स्वरुप क्या है ? स्पष्ट कीजिए।

४. नाटक के विकास को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

१.९ संदर्भ ग्रंथ

१. हिंदी नाटक - बच्चन सिंह

२. नाटक : विवेचना और दृष्टि - डॉ. मोहसिन खान

३. हिंदी नाटक के पाँच दशक - कुसुम खेमानी

४. हिंदी नाटक बदलते आयाम - नरेंद्रनाथ त्रिपाठी

५. आधुनिक हिंदी नाटक - गिरिश रस्तोगी

*****

munotes.in

२

नाटक के तत्त्व एवं प्रकार

इकाई की रूपरेखा

२.० इकाई का उद्देश्य

२.१ प्रस्तावना

२.२ नाटक के तत्व

२.३ सारांश

२.४ लघुत्तरीय प्रश्न

२.५ दीर्घोत्तरी प्रश्न

२.६ संदर्भ ग्रंथ

२.० इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय में निम्नलिखित बिंदुओं को छात्र समझ जायेंगे।

- नाटक के विभिन्न तत्त्वों पर विचार करने हेतु।
- नाटक के विभिन्न प्रकारो को समझने हेतु।

२.१ प्रस्तावना

नाट्य तत्व संबंधी भारतीय एवं पाश्चात्य धारणाओं में काफी अंतर है। नाटक की जो विधा है वह व्यापकता से प्रेरणा ग्रहण करती है, और मानवीय जीवन के लोगो को केंद्रीयभूत करती है। नाट्य विषयक धारणा एवं भारतीय तत्वों का अध्ययन अत्यावश्यक है। तत्व ही नाटक के स्वरुप का निर्माण करते है। भारतीय और पाश्चात्य आचार्यो ने नाटक के तत्वों को अलग - अलग माना है।

२.२ नाटक के तत्व

अभिनय के अतिरिक्त नाटक के तीन तत्वों का उल्लेख प्राचीन भारतीय आचार्यो ने किया है

१) वस्तु २) नेता ३) रस

१) वस्तु:

उपन्यास की ही तरह नाटक की जीवन सामग्री को भी वस्तु कहते है। आचार्यों ने इसे तीन प्रकार का माना है - प्रख्यात, उत्पाद्य, मिश्रित। प्रख्यात वस्तु इतिहास या पुराण से ग्रहण की जाती है। लेखक जब वस्तु की कल्पना कर लेता है तो उसे उत्पाद्य कहते है। मिश्र वस्तु ऐतिहासिक और काल्पनिक सामग्री का मेल होती है। यह भेद वस्तु के स्रोत के

munotes.in

आधार पर किया गया है। महत्व के आधार पर भी वस्तु के भेद किए गए है, जिन्हे आधिकारिक और प्रासंगिक कहा जाता है । आधिकारिक कथावस्तु मुख्य होती है और प्रासंगिक सहायक।

किन्तु नाट्य वस्तु की जो केंद्रीय विशेषता है उसका उल्लेख प्राचीन भारतीय नाट्याचार्यों ने नहीं किया है। नाटक की वस्तु मूलतः विरोध - गर्भित होती है। डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इस विषय में लिखा है - प्रत्येक नाटकीय कथा कुछ विरोधो को लेकर अग्रेसर होती है। नायक का उसके भाग्य या परिस्थितियों के साथ विरोध हो सकता है। सामाजिक रूढ़ियों के साथ हो सकता है और फिर अपने मत के परस्पर विरोधी आदर्शो के संघर्ष के रूप में भी हो सकता है। इस विरोध से ही नाटक की घटना में गति या क्रिया आती है। यह विरोध 'मृच्छकटिक' में भी है और 'शकुंतला' में भी है। अर्थात विरोध-गर्भित जीवन स्थितियों को ही नाट्य वस्तु कहना उचित है।

कथानक:

इस नाट्य वस्तु का संगठन और विन्यास जिस प्रक्रिया में होता है उसे नाटक का कथानक कहा जाता है। भारतीय आचार्यों ने कथानक संगठन में तीन मुख्य बातों का होना स्वीकार किया है। कार्यावस्था, अर्थप्रकृति और संधि। इन तीनो के पांच भेद है। कार्यावस्था के भेद है – आरंभ, प्रयत्न, प्राप्त्याशा, नियताप्ति और फलागम । नाटक के फल प्राप्ति की ओर बढ़ने में कार्य की इन पाँचो अवस्थाओं का क्रमिक योग होता है । इन कार्यावस्थाओ के कारण रूप में अर्थ प्रकृतियों की भूमिका होती है। इनकी संख्या भी पाँच है - बीज, बिन्दु, पताका, प्रकरी और कार्य। नाटक के कथानक में संधियो की योजना कार्यान्वयन और अर्थ प्रकृतियों के योग से होती है। जैसे आरंभ और बीज के मेल से मुखसंधि होती है। इसी प्रकार इन दोनों के क्रमिक मेल से गर्भ, विमर्श और निर्वहण संधियों का होना बताया जाता है। किन्तु आधुनिक युग में इन सब बातो को शास्त्रीय मानकर प्रायः छोड़ दिया गया है। इनमे शास्त्र की नियम बद्धता अधिक है, रचनात्मक प्रेरण क्रम।

पश्चिम के प्रभाव और रचनात्मक स्वभाव इन दोनों कारणों से नाटक के कथानक की पाँच अवस्थाओं को स्वीकार कर लिया गया है। इनके नाम है - आरंभ, विकास, चरमबिंदु, ऱ्हास और समाप्ति। इन्ही के आधार पर सामान्यतः नाटकों में ५ अंको का विधान किया जाता है। किन्तु वर्तमान समय के तीन अंक अथवा बिना अंक के भी नाटक लिखे जा रहे है। इससे अनुमान किया जा सकता है कि नाटकीय कथानक के विकास की क्रम - व्यवस्था टूट रही है। जीवन में आने वाली जटिलता के कारण गति के स्वरूप में भी जटिलता आई है। आरम्भ, विकास और हास्य की सीधी रेखा वाली गति के मुकाबले घुसपैठ और भितरघात करने वाली गतियाँ क्रम-विकास की धारणा को अप्रभावी करती जा रही है। वर्तमान नाटक का कथानक गति के इन्ही संक्रमणशील रूपों से बन रहा है।

नेता:

(पात्र) नाटक में निहित क्रियाओं को फल की ओर ले जाने वाले प्रथम पात्र को नायक कहा जाता है। भारतीय दृष्टि के अनुसार मुख्य कार्य का फल जिसे प्राप्त होता है वही नायक हो सकता है। किन्तु पश्चिमी दृष्टि से जो पात्र क्रियाव्यापारों के केंद्र में होता है उसे ही नायक की

संज्ञा प्राप्त होती है। नायक का तात्पर्य यह है कि उनमे जीवन के महत्वपूर्ण और विविध रूपों तथा पक्षों के धारण करने की योग्यता होती है। शास्त्र के अनुसार प्रतिनायक भी नाटक में होता है। इसके अतिरिक्त विदूषक और अन्य पात्र होते है, जिनकी भूमिका नाटकीय क्रिया व्यापार में होता है। स्त्री पात्रो में नायिका की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। शास्त्रीय दृष्टि से नायक धीरोदात्त और धीरललित, धीर प्रशांत और धीरोदात्त होता है। धीरोदात्त और धीरललित नायक की प्रतिष्ठा अधिक होती है। नायिकाओं में भी स्वकीया, परकीया और सामान्या नायिकाएँ होती है। स्वकीया नायिका को अधिक अच्छा माना जाता है। जिस प्रकार विरोध गर्भित जीवन स्थिति नाटकीय मानी जाती है, उसी प्रकार विरोध गर्भित व्यक्तित्व वाले पात्र नाटक के अधिक उपयुक्त होते है। इसी कारण आधुनिक युग में नाटक के पात्र अपने आदर्शो, गुणों और नैतिकता के कारण महत्वपूर्ण न होकर आधुनिक समाज और जीवन के अनेक अंतर्विरोधों के प्रकाशित करने के कारण महत्वपूर्ण होते है। यही कारण है कि नायक की धारणा भी खंडित हो गयी है। आधुनिक नाटक के पात्र अपने चरित्रगत नैतिक गुणों के कारण कम, अपने व्यक्तित्व के अंतर्विरोधों के कारण अधिक सृजनशील होते है। आधुनिक जीवन की जटिल विकट परिस्थितियों में आदर्शवादी पात्र काल्पनिक लगते हैं, यथार्थवादी पात्र वास्तविक। आदर्शवादी पात्र जीवन में उभरे विरोधो को शांत करता है, और यथार्थवादी पात्र उन्हें और उग्र बनाता है। इन यथार्थवादी पात्रों में आधुनिक नाटकों में उन पात्रों का अधिक महत्व है, जिनका व्यक्तित्व यथार्थवादी व्यवस्थाओं के प्रति विद्रोही है। पाश्चात्य विद्वानों ने इन तत्वों की संख्या ६ बताई है कथावस्तु, पात्र, संवाद, देशकाल, उद्देश्य और शैली। पाश्चात्य में रस के उद्देश्य के अंतर्गत संघर्ष तत्व को प्रधानता दी गयी है। प्रसिद्ध अंग्रेजी नाटककार शेक्सपीयर के नाटकों का प्राणतत्व संघर्ष ही है। अन्य सभी तत्व एक दूसरे से मिलते-जुलते है, अतः ६ तत्वों को लेकर ही नाटक की चर्चा अधिक उपकारक सिद्ध हो सकती है। भारतीय नाटक के तीनो तत्व नाटक के ६ तत्वों के अंतर्गत आ जाते है।

(i) कथावस्तु:

कहानी या घटना क्रम को कथावस्तु कहते है। यद्यपि उपन्यास और कहानी की तरह नाटक के लिए भी वस्तु चयन किसी भी क्षेत्र से किया जा सकता है, किंतु नाटककार को नित्य समय और अभिनय के अनुकूल रंगमंच आदि की मर्यादा के अनुसार कथा सामग्री का चयन करना पड़ता है। मनोविज्ञान ने नाटक में भी कथानक की स्थूलता को सूक्ष्मता में रूपांतरित करने का भरसक प्रयत्न किया है। आज नाटक के लिए उपन्यास या कहानी का नाट्य रूपांतर करने की प्रक्रिया बड़ी सफल सिद्ध हुई है।

भारतीय नाट्य शास्त्र के अनुसार कथावस्तु दो प्रकार की होती है।

१) अधिकारी: अर्थात प्रमुख कथा।

२) प्रासंगिक: अर्थात प्रसंग अनुसार आई हुई गौण कथा या कथाएं, दोनों कथाओं का पारंपरिक संगठन आवश्यक है। प्रासंगिक कथा दो तरह की होती है।

i) पताका: जो मुख्य कथा के साथ-साथ अंत तक चलती है।

ii) प्रकरी: जो कहीं भी समाप्त हो सकती है। प्रेरणा स्रोत या आधार की दृष्टि से कथावस्तु के तीन प्रकार माने गए हैं।

१. प्रख्यात, जिसका आधार पूरा इतिहास या कोई प्रसिद्ध रचना हो।

२. उत्पाद्य, जो लेखक की कल्पना की उपज होती है।

३. मिश्र, जिसमें इतिहास और कल्पना का समन्वय हो। भारतीय मतानुसार नाटक की कथावस्तु में कार्य-व्यापार की पांच अवस्था है, प्रारंभ, प्रयत्न, प्राप्त्याशा, नियताप्ति तथा फलागम। पाश्चात्य नाटक में यही वर्गीकरण कुछ शब्द परिवर्तन के अनुसार इस प्रकार किया गया है। प्रारंभ, विकास, चरम सीमा, उतार तथा अंत। उपर्युक्त दोनों विभाजनों में सबसे बड़ा अंतर संघर्ष तत्व को लेकर है। हमारे यहां रस को नाटक की आत्मा माना गया है। जबकि पश्चिम में संघर्ष को नाटक का प्राण तत्व स्वीकार किया है। ऊपर की अवस्थाओं के संयोजन के लिए हमारे यहां पाँच अर्थप्रकृतियों और पांच संधियों का होना आवश्यक माना गया है। रंगमंच पर कथा की प्रस्तुति को लेकर भी उसके दो भेद बताए गए हैं।

१) दृश्य: जिसकी मंच पर प्रत्यक्ष प्रस्तुति की गई है।

२) सूच्य: जिसे मंच पर प्रस्तुत करने के बदले मात्र सूचित कर दिया जाता है। प्राचीन और नवीन नाटकों में कथावस्तु विषयक उपर्युक्त सूक्ष्म विभाजन को ध्यान में नहीं लिया जाता। आज नाटक की कथावस्तु में अन्विति, सुस्वागतम, चुस्तता, संक्षिप्तता, सांकेतिकता, तीव्रता का होना अति आवश्यक माना जाता है। संक्षिप्तता की बात को सभी ने स्वीकार किया है और इसीलिए संकलन त्रय के सिद्धांत को अधिक महत्व दिया गया है। वस्तुस्थिति के मार्मिक चित्रण के लिए नाट्य व्याय का प्रयोग किया जा सकता है।

(ii) पात्र:

नाटक की कथावस्तु या घटना व्यापार का मुख्य आधार पात्र होते हैं। प्रमुख पात्र नायक कहलाता है। संस्कृत नाट्यशास्त्र में नायक के चार प्रकारों का उल्लेख है।

१) धीरोदत्त जो धीर, वीर, गंभीर और उदार हो।

२) धीरललित जो कला और सौंदर्य प्रेमी, ललित गुणों से युक्त हो।

३) धीरप्रशांत जो सुख शांति और संतोष प्रिय हो।

४) धीरोदात्त चपल, चंचल, छली, दंभी व्यक्ति इसके अंतर्गत आ सकता है।

नायक का विरोधी या प्रतिस्पर्धी खलनायक कहा जाता है। संस्कृत नाटकों में विदूषक का होना जरूरी माना जाता था। आधुनिक नाटक में नायक या नायिका के लिए इन गुणों का होना आवश्यक माना नहीं जाता। साधारण से साधारण और बुरे से बुरा कोई भी व्यक्ति नाटक का नायक हो सकता है। महत्व व्यक्ति की स्थिति परिस्थिति का नहीं, किंतु उसके चरित्र अंकन का है। नाटककार को कम से कम समय में पात्र के समग्र व्यक्तित्व को खोल

कर रखना होता है। परिस्थितियों से जूझते टकराते संघर्षशील व्यक्तित्व के पात्र अधिक सफल माने जाते हैं। नाटक में नाटककार स्वयं पात्रों के विषय में कुछ नहीं कहता, किंतु पात्र संवाद, विसंवाद तथा विभिन्न अभिनय मुद्राओं के द्वारा स्वयं अपने चरित्र को उद्घाटित करता है। प्राचीन नाटक की भांति स्वगत कथन को अब अधिक महत्व नहीं दिया जाता।

(iii) संवाद:

वस्तुतः संवाद (कथोपकथन) ही नाटक को नाटक बनाते हैं। प्राचीन ग्रीक नाटकों में तो संवादों के अतिरिक्त कुछ होता ही नहीं था। आज भी नाटक में जब कि कार्य (Action) का महत्व बढ़ गया है, संवाद का महत्व कम नहीं हुआ। बोल्टन का कहना है कि – 'A play is its dialogue' भारतीय आचार्य ने भी संवाद योजना को नाटक का मूल आधार बताते हुए उसके तीन प्रकार बताए हैं।

१) नियत श्राव्य: जिसमें किसी निश्चित पात्र के साथ ही वार्तालाप किया जाता है।

२) सर्व श्राव्य: यह सबके सुनने के लिए होता है। इसे प्रकट या प्रकाश्य भी कहते है।

३) अश्राव्य: जो मात्र दर्शकों के सुनने के लिए ही होता है। आधुनिक नाटक में ऐसे किसी वर्गीकरण को पूर्णरूपेण स्वीकार नहीं किया जाता, विषय के अनुरूप संवादों में वैविध्य का होना अपेक्षित है। पश्चिम में नाटक के दो प्रमुख प्रकार बताए गए है - ट्रेजेडी और कॉमेडी। ट्रेजेडी के संवादों में गंभीरता और गरिमा तथा कॉमेडी के संवादों में व्यंग्य, विनोद की प्रधानता होती है। पात्र की स्थिति, स्तर आदि के अनुकूल संवादों की योजना अधिक स्वाभाविक और प्राणवान होती है। फिर भी नाटक के संवादों की भाषा में साहित्यिक अत्यंत आवश्यक है, शेक्सपीयर नाटक इसके स्पष्ट प्रमाण है।

(iv) देशकाल या वातावरण:

उपन्यास की भाँति नाटक में भी देशकाल या वातावरण का यथोचित चित्रण होना चाहिए। नाटक का संबंध रंगमंच से है अतः नाटक में रंगमंच के अनुरूप वातावरण का चित्रण हो, यह बहुत आवश्यक है। नाटक के समय प्रभाव में स्वाभाविकता लाने के लिए देशकाल या उपयुक्त चित्रण सहायक सिद्ध होता है। प्राचीन ग्रीक समीक्षकों ने इसी संदर्भ में संकलनत्रय से तात्पर्य है - स्थल, कार्य और काल की एकता। अर्थात नाटक में वर्णित घटना किसी एक ही कार्य या कृत्य से संबंधित हो एक ही स्थान की हो ओर एक ही समय में घटित हो। घटना स्थल और घटना काल कहीं भी अलग-अलग न हो। संकलनत्रय का विधान आगे चलकर नाटक के कलात्मक विकास में बाधक सिद्ध हुआ, अतः उसका पालन क्रमशः कम होने लगा। आधुनिक एकांकियों में कुछ सीमा तक ही इस तत्व का विधान देखने को मिलता है।

(v) शैली:

नाटक मूलतः अभिनय की कला है और रंगमंच के साथ उसका सीधा संबंध है अतः नाटक की प्रस्तुति की विभिन्न शैलियों की चर्चा अभिनय और रंगमंच के केंद्र में रखकर ही की जा

सकती है। भारतीय नाट्यशास्त्र में अभिनय के चार प्रकार माने गए है - १) आंगिक, २) वाचिक, ३) आहार्य, ४) सात्विक।

१) **आंगिक:** इसका सम्बन्ध शरीर के विभिन्न अंगो से है। शरीर के विभिन्न अंगो के संचालन द्वारा भावों की अभिव्यक्ति की जाती है। यह तीन प्रकार से किया जाता है।

२) **वाचिक:** इसका सम्बन्ध वाणी या शब्द से है, आंगिक अभिनय की पुष्टि में यह सहायक सिद्ध होता है।

३) **आहार्य:** इसमें रंगरूप, वेशभूषा, वस्त्र, आभूषण आदि की साज-सज्जा का समावेश होता है।

४) **सात्विक:** इसमें स्वेद, रोमांच, कंप, हर्ष, अश्रु आदि द्वारा सात्विक भावों का प्रदर्शन किया जाता है। आधुनिक नाटक मे भारतीय या पाश्चात्य नाटक में परंपरागत लक्षणों का पूर्ण रूपेण पालन नहीं किया जाता। आधुनिक ज्ञान-विज्ञानं के प्रकाश में रंगमंच पर नाटक को प्रस्तुत करने की नई-नई शैलियों का विकास हुआ है। सिनेमा के अविष्कार और एकांकी नाटक के बढ़ते प्रभाव ने रंगमंच विषयक नए-नए प्रयोगों को जन्म दिया। आज के नाटक में प्रेक्षक या दर्शक की साझेदारी को अधिक महत्व दिया जाता है। हत्या, मृत्यु, युद्ध, विषयक दृश्यों को लेकर प्राचीन नाटक में जो प्रतिबंध थे, वे अब शिथिल हो चुके है। रंगमंच की आधुनिक सुसज्जा, ध्वनि प्रकाश योजना ने नाटक की प्रस्तुति को परंपरागत नाटक की तुलना में बहुत कुछ बदला है। रंगमंच को लेकर आधुनिक नाटक में निरंतर नए प्रयोगों को स्थान मिलता रहा है। एक तरफ कुछ लोग रंगमंच की समृद्धि को आवश्यक मानते है तो कुछ लोग कम से कम साधनों द्वारा नाटक के अभिनय का समर्थन करते है। टी. वी. नाटकों ने इस विषय पर फिर से नए सिरे से सोचने को प्रेरित किया है। इस प्रकार नाटक और रंगमंच का निकट का सम्बन्ध है और दोनों ही एक-दूसरे को प्रभावित करते है।

(vi) उद्देश्य:

नाटक के उद्देश्य को लेकर भारतीय तथा पाश्चात्य दृष्टिकोण भिन्न-भिन्न है। भारतीय आचार्यों ने रसानुभूति को नाटक का मुख्य उद्देश्य बताते हुए आदर्शवादी नाटकों को महत्व दिया है। अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष आदि में से कोई एक जीवन-उद्देश्य ही नाटक का भी उद्देश्य हो सकता है। भारतीय नाटक प्रायः सुखांत होता है। पाश्चात्य नाटक में जीवन की आलोचना ही प्रमुख उद्देश्य बनकर आती है। संघर्ष द्वारा इस उद्देश्य की प्राप्ति की जाती है। आंतरिक और बाह्य संघर्ष के माध्यम से जीवन की वास्तविकता का परिचय मिलता है। पात्रों के व्यक्तित्व में सूक्ष्म विश्लेषण में संघर्ष द्वारा तत्व ही सहायक सिद्ध होता है। कुछ लोग संघर्ष को ही नाटक का उद्देश्य मान बैठते है, किन्तु वास्तव में संघर्ष द्वारा जीवन को समझाने में सहायता मिलती है। वर्तमान नाटक हमारे जीवन, समाज की वास्तविकता, खोखलापन, दंभ आदि का पर्दाफाश करने को अपना मुख्य उद्देश्य मानता है। व्यक्ति और समाज की शिक्षा संस्कारिता की दृष्टि से नाटक एक सर्वाधिक सफल माध्यम बन सकता है। दर्शक या प्रेक्षक के साथ सीधा संबंध स्थापित कर सकने की अपने विशेष लाक्षणिकता के कारण नाटक सामाजिक क्रांति का भी माध्यम बन सकता है। भारतीय काव्यशास्त्र में नाट्य

munotes.in

लक्षण तथा उसके भेदोपभेदों का विस्तार पूर्वक विवेचन किया है। इसी प्रसंग में संस्कृत आचार्यों ने नाटक के विभिन्न तत्वों का विवेचन किया है, किंतु इन तत्वों को लेकर भारतीय और पाश्चात्य आचार्यों में मतभेद है, जो वस्तुतः नामकरण और दृष्टिकोण के कारण है।

भारतीय आचार्यों की दृष्टि भरतमुनि को नाट्यशास्त्र का प्रणेता माना गया है। उन्होंने नाटक के प्रमुख तत्वों का विशद विचार किया है, जिसके अंतर्गत परवर्ती आचार्य ने नाटक के मुख्य रूप से तीन तत्व माने हैं - १) वस्तु २) पात्र या नायक, ३) रस। जबकि भरत मुनि ने चार तत्व स्वीकार किए हैं - १) संवाद, २) गान ३) नाट्य और ४) रस। कुछ विद्वानों ने अभिनय और वृत्ति को भी नेतृत्व में स्वीकार किया है। वस्तु से तात्पर्य नाटक की कहानी कथा या कथानक होता है, जिसमें ५ नाट्य संधियाँ तथा ५ अवस्थाएं समाविष्ट होती है। कथानक भी दो प्रकार का होता है - अधिकारिक और प्रासंगिक। अर्थ प्रकृतियों के द्वारा ही कथानक का विकास होता है। संस्कृत आचार्यों ने नायक, नायिका, उपनायक, विदूषक, चेट आदि पात्रों की योजना कथानक और रस के अनुसार स्वीकार की है। नाट्य रचनाओं में चार प्रकार के अभिनय के साथ ही विभिन्न प्रकृतियों को माना है। इस प्रकार प्राचीन भारतीय आचार्यों ने अभिनय और रस को प्रधानता देते हुए नाटक के प्रमुख तत्वों का संयोजन किया है।

वर्तमान कालीन अनेक समीक्षकों ने पाश्चात्य आचार्यों के अनुसरण पर नाट्य तत्वों का विवेचन किया है। इनके अनुसार नाटक के ६ तत्व माने गए हैं - १. कथावस्तु, २. पात्र और चरित्र-चित्रण, ३. कथोपकथन, ४. देशकाल, ५. उद्देश्य और ६. भाषा शैली।

२.३ सारांश

हिंदी नाटक के विकास तथा उसके तत्व की कहानी अत्यंत स्पष्ट दिखाई देती है। हिंदी के नाट्य साहित्य को संस्कृत की समृद्ध नाटक परंपरा विरासत में मिली है। भरतमुनि का नाट्यशास्त्र इस बात का प्रमाण है कि भारत में रंगमंच व रूपक का विकास सैकड़ों वर्षो पहले हो चुका था। नाटक के तत्व की जो प्रमुख विशेषता है उसका उल्लेख प्राचीन भारतीय नाट्य आचार्यों ने बिल्कुल नहीं किया है। नाटक की वस्तु मूलतः विरोध - गर्भित होती है। नाटक में नाटक का अपने विचारों भावों का प्रतिपादन पात्रों के माध्यम से करना आवश्यक होता है। नाटक के तत्व में देशकाल का निर्वाह भी होना चाहिए। इस तत्व का निर्वाह अभिनय, दृश्य विधान, पात्रों की वेशभूषा, आचार-विचार, संस्कृति, रीति-रिवाज आदि के द्वारा होता है। देश काल के प्रयोग से नाटक जीवंत हो उठते हैं।

नाटक की भाषा सरल, स्पष्ट और सजीव होनी चाहिए। भिन्न-भिन्न पात्रों की श्रेणी योग्यता तथा परिस्थिति के अनुसार भाषा का रूप भी होना चाहिए। पात्रानुकूल भाषा नाटक में सौंदर्य की वृद्धि करती है, उसे प्रसाद, ओज और माधुर्य गुण से समन्वित होना चाहिए, साथ ही उसे कलात्मक एवं प्रभावशाली भी होना चाहिए। नाटक में अति अलंकृत भाषा अधिक रुचिकर नहीं होती है।

munotes.in

२.४ लघुत्तरीय प्रश्न

१. नाट्यशास्त्र के प्रणेता कौन माने जाते हैं?

उ - आचार्य भरतमुनि।

२. अनुभाव की संख्या कितनी मानी गई है?

उ - चार।

३. पाश्चात्य आचार्यों ने नाटक के कितने तत्व स्वीकार किए है?

उ - छः।

४. भरतमुनि ने नाटक के कितने तत्त्व बताये हैं?

उ - चार।

५. रंगमंच पर कथा प्रस्तुति के कितने भेद किए गये हैं?

उ - दो।

२.५ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१) नाटक के कितने तत्व हैं ? स्पष्ट कीजिए।

२) नेता (पात्र) नाटक के तत्व की दृष्टि से स्पष्ट कीजिए।

२.६ संदर्भ ग्रंथ

१. हिंदी नाटक - बच्चन सिंह

२. नाटक : विवेचना और दृष्टि - डॉ. मोहसिन खान

३. हिंदी नाटक के पाँच दशक - कुसुम खेमानी

४. हिंदी नाटक बदलते आयाम - नरेंद्रनाथ त्रिपाठी

५. आधुनिक हिंदी नाटक - गिरिश रस्तोगी

*****

munotes.in

३

‘काला पत्थर’ नाटक की कथावस्तु

इकाई की रूपरेखा

३.० इकाई का उद्देश्य

३.१ प्रस्तावना

३.२ 'काला पत्थर' नाटक की कथावस्तु

३.४ सारांश

३.५ लघूत्तरीय प्रश्न

३.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न

३.७ संदर्भसहित व्याख्या

३.८ संदर्भ ग्रंथ

३.० इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में निम्नलिखित बिंदुओं का छात्र अध्ययन करेंगे।

- इस इकाई के माध्यम से ‘नाटक’ विधा के महत्व को समझेंगे।
- ‘काला पत्थर’ नाटक के लेखक डॉ. सुरेश शुक्ल ‘चन्द्र’ के साहित्यिक योगदान से अवगत कराना।
- इस नाटक से भारतीय ग्रामीण जीवन में व्याप्त समस्याओं से अवगत होंगे।
- इस इकाई के माध्यम से छात्रों को नाटक की कथावस्तु की जानकारी मिलेगी।

३.१ प्रस्तावना

‘काला पत्थर’ नाटक डॉ. सुरेश शुक्ल ‘चन्द्र’ की उत्कृष्ट रचना है। डॉ. सुरेश शुक्ल ‘चन्द्र’ हिन्दी के शीर्ष नाटकारों में एक है। इनका जन्म ८ फरवरी सन् १९३६ में उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले में हुआ था। अध्यापन के बाद पूर्ण कालिक लेखन में जुट गए। डॉ. शुक्ल जी का लेखन क्षेत्र काफी विस्तृत है। इन्होंने साहित्य को लगभग हर विधा को समृद्ध किया जिनमें नाटक एकांकी संग्रह, उपन्यास, काव्य-संग्रह, आत्मकथा और बाल-साहित्य शामिल है। अब तक इन्हें इनकी कृतियों के लिए सन् १९६८ में उ. प्र. शासन द्वारा पुरस्कृत सन् १९९८ में उत्कल युवा सांस्कृतिक संघ उड़ीसा द्वारा नाट्यभूषण की उपाधि से विभूषित किया गया है। मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी द्वारा सन् २००८ में ‘हरीकृष्ण प्रेग्रो’ पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

munotes.in

लोकप्रिय नाटककार डॉ. सुरेश शुक्ल 'चन्द्र' द्वारा रचित नाटक 'काला पत्थर' आधुनिक हिन्दी नाटकों में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। यह नाटक ग्रामीण जीवन की समस्याओं पर केंद्रित नाटक है। इस नाटक में शोषण की पराकाष्ठा पार कर सूदखोर महाजन की निहायत स्वार्थपरता और हर तरह से लाचार, मजबूर, शोषित किसानों की दयनीय दशा को अत्यंत मार्मिकता और संवेदना से उकेरा गया है। यह नाटक गाँव की तमाम विसंगतियों और विडंबनाओं को उजागर करता है। आज हमारे गाँव के सारे नैतिक मूल्य नदारद हो रहे है। आज भारतीय समाज में किसानों-मजदूरों की आर्थिक अवस्था दिन-प्रतिदिन बदतर होती जा रही है। नाटक में स्त्री विषयक समस्याओं जैसे बाल-विवाह, अनमेल विवाह, दहेज प्रथा, पत्नी प्रताड़ना, स्त्री दासता जैसे अनेक मुद्दों को दर्शाया गया है। शासन तंत्र पूरी तरह से भ्रष्टाचार में डूबा दिखाया गया है। ग्राम पंचायत अपना हित साधने के लिए साहूकारों का साथ दे रही है। नाटककार गाँव में व्याप्त त्रासद स्थिति से उबारने के लिए युवा शक्ति पर विश्वास जगाने की कोशिश करता है। नाटककार का मानना है कि जिस दिन यह युवा-शक्ति भ्रष्टाचार के विरुद्ध पूरी निष्ठा के साथ एकजुट खड़ी हो जायेगी, उस दिन देश में नया प्रभात दिखेगा।

डॉ. सुरेश शुक्ल 'चन्द्र' द्वारा लिखित नाटक 'काला पत्थर' अप्रैल २०१२ में लिखा गया है। सन् २०१४ की पहली बार इसका मंचन किया गया। काला पत्थर नाटक कुल छः दृश्य परिवर्तनों में विभक्त है।

३.२ 'काला पत्थर' नाटक की कथावस्तु:

नाटक की कथा का प्रारंभ गरीबपुर गाँव के एक किसान संतोषी के घर से होती है। किसान संतोषी की सारी जमीन, सारा सामान, घर सब कुछ कल्लू सेठ के पास गिरवी पड़ी है। संतोषी किसान अपनी लकवा-ग्रस्त पत्नी का इलाज कराने के लिए धनाढ्य सेठ कल्लू सेठ से नाक रगड़कर गिड़गिड़ाता हुआ पाँच सौ रूपया माँगता रह जाता है, लेकिन कल्लू सेठ बिना रेहन रखे कर्ज देने को तैयार नहीं होता है। नतीजन कल्लू सेठ की निहायत निर्दयता और स्वार्थी प्रवृत्ति के कारण संतोषी किसान की पत्नी बिना इलाज के मर जाती है। उसका दाह-संस्कार भी गाँव वाले चंदा इकट्ठा करके करते हैं। नाटक के प्रथम दृश्य में किसानों की गरीबी, लाचारी, मजबूरी और शोषक सूदखोर महाजन कल्लू सेठ की निष्ठुरता को दर्शाया गया है। कल्लू सेठ की संवेदनहीनता उस व्यक्त अपनी पराकाष्ठाएँ लांघ जाती है, जब वह गाँव के सरपंच द्वारा दस हजार रुपये माँगने पर उसे तुरंत अपनी तिजोरी में से निकालकर दे देता है, लेकिन वह सरपंच से रेहन के विषय में पूछता तक नहीं है, और सरपंच की सेवा का मौका पाकर अपने को भाग्यवान मानता है। जब सरपंच को पैसा मिल जाता है और कल्लू सेठ से अपने लिए कोई काम हो तो बताने का मौका देता है, तो तुरंत कल्लू सेठ पुत्र प्राप्ति की अभिलाषा व्यक्त कर देता है। सरपंच द्वारा पुनिया का नाम सुनाते ही वह प्रसन्न हो जाता है। सरपंच द्वारा पच्चीस हजार रुपये और पूरी जमात को भोज देने की शर्त को सहर्ष स्वीकार कर लेता है।

महाजन कल्लू सेठ की पत्नी विमला उसे समझाते-बुझाते हुए ईमानदारी से काम करने के लिए प्रेरित करती है। विमला कल्लू सेठ से संतोषी को उसकी बीमार पत्नी के इलाज के लिए पाँच सौ रुपये न देने पर नाराजगी व्यक्त करती है, तो कल्लू सेठ उसे डाँटते हुए विमला

को सिर्फ अपने काम से काम रखने को सलाह देता है। कल्लू सेठ कहता है कि महाजनी मेरा धन्धा है, मैं यहाँ पैसा लुटाने को नहीं बैठा हूँ। विमला कल्लू सेठ से कहती है कि गरीबों का खून चूसने को धन्धा कहते है। विमला के कभी किसी राय-परामर्श को कल्लू सेठ ने आत्मसात नहीं किया। विमला कभी नहीं चाहती थी कि उसकी छह संतानें हों, लेकिन कल्लू सेठ को चिता में मुखाग्नि देने, वंश चलाने, पितरों को पानी देने और पितृ- ऋण से उऋण होने के लिए किसी भी कीमत पर अपना जन्माया बेटा चाहिए था, इसी के इन्तजार में छह बेटियाँ हो जाती है। वह लड़कियों को हमेशा पराया धन मानता था। कल्लू सेठ बेटा गोद लेने में विश्वास नहीं करता था। उसकी इस मानसिकता को बदलने के लिए विमला उसे बहुत समझाती है "यह तुम्हारा भ्रम है पुरानी सोच है। लड़के-लडकी में कोई भेद नहीं है। तुम्हारी इसी मानसिकता ने घर को तबाह कर दिया।" विमला का मानना है कि उसकी छह बेटियों के जीवन में जो कुछ भी त्रासदपूर्ण घटनाएँ घटी हैं, उसका एकमात्र दोषी उसका पति कल्लू सेठ ही हैं, क्योंकि कल्लू सेठ के जीवन का मुख्य उद्देश्य धन-संचय के अतिरिक्त कुछ नहीं है। कल्लू सेठ दहेज बचाने में अपनी चार बेटियों का विवाह उनसे दुने उम्र के द्विजहा वृद्ध पुरुषों से करे देता है। विमला की यह आत्मपीड़ा उसकी इन उक्तियों में झलकती है- "तुमने चार लड़कियों का विवाह द्विजहा लड़कों से किया, जो लड़कियों से दूनी उम्र के थे। यही कारण है कि तीन विधवा हुई, तुम्हारे सिर पर बैठी, तुम्हें कोस रही है। चौथी लड़की जब ससुराल के अत्याचार नहीं सह पाती तो आत्महत्या कर ली। एक लड़की कुवाँरी ही घर से कहीं भाग गयी। एक लड़की कुवाँरी बैठी है। दहेज न देना पड़े, इसीलिए तुमने यह जघन्य पाप किया।" कल्लू सेठ विमला की बात सुनकर गुस्से से लाल जो जाता है और कहता है कि मैंने तो उन सभी का विवाह धनी घरों में किया था। मैं उनके सुख-दुख का जिम्मेदार नहीं हूँ। विमला अपने पति कल्लू सेठ की अपनी बेटियों के प्रति उदासीनता को देखकर निराश हो जाती है। दरअसल महाजन कल्लू सेठ स्त्री जीवन को खिलौने के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं समझता था। बेटियों के साथ उसने जो कुछ किया वह तो जगजाहिर था, परंतु वह अपनी पत्नी को भी कुछ नहीं समझता था। जब विमला उसे समझाने की कोशिश करती है, तो वह अत्यंत बेरुखी, अभद्रता और आक्रोश से पेश आता है।

कल्लू सेठ पुत्र प्राप्ति की अभिलाषा की बात जब वह गाँव के सरपंच के सामने रखता है, तो सरपंच भी आश्चर्यकारक हो जाता है और उसे किसी रिश्तेदार के बच्चे को गोद लेने को कहता है। कल्लू सेठ को तो अपने खून की सन्तान चाहिए थी, इसके लिए वह हर खर्च उठाने को तैयार है। बहरहाल, सरपंच जिस नवयुवती से सेठ कल्लू की विवाह की योजना बनाता है, वह लड़की जीवन में अनेक झंझावातों के दौर से गुजर रही है। वह संतोषी किसान की इकलौती संतान है, जिसका विवाह संबंध टूटने की कगार पर था। पुनिया को वह पाने के लिए सरपंच को पच्चीस हजार रुपया और पूरी जमात को भोज देने को सहर्ष तैयार हो जाता है। उसे इस स्थिति में न ही अपने जीवन संगिनी विमला, तीन विधवा और दो बिन व्याहीं जवान बेटियों की परवाह नहीं होती। अपनी साठ वर्ष की आयु में अपनी जाति-बिरादरी की बीस वर्षीय एक सुंदर युवती पुनिया से हर हाल विवाह करना चाहता है ताकि उससे बेटा पैदा कर सके। पुनिया के पिता की सारी जायदाद सेठ कल्लू के पास गिरवी रहती है। इन्हीं सब का फायदा उठाकर संतोषी किसान के घर पहुँच कर कल्लू सेठ पुनिया से विवाह करने की अपनी अभिलाषा व्यक्त करता है। संतोषी के सारे कर्ज माफ करने की भी बात करता है। उसके इस प्रस्ताव को नहीं किसान संतोषी मानता और न ही पुनिया। पुनिया

उसे तुरन्त अपने घर से निकल जाने को कहती है। वह कल्लू सेठ को अपनी माँ का हत्यारा मानती है क्योंकि यदि कल्लू सेठ समय पर पाँच सौ रुपये दे दिया होता तो शायद उसकी माँ आज जीवित रहती।

पुनिया, जिसका विवाह उसके माता-पिता ने महज पाँच वर्ष की आयु में ही कर दिया था। दस साल बाद यानि पंद्रह साल की आयु में महाजन कल्लू सेठ के पास अपनी जायदाद सब कुछ गिरवी रखकर पाँच हजार रुपये कर्ज लेकर, बेटी पुनिया का गौना करता है। ससुराल में जाने पर पुनिया को पता चलता है कि उसका पति, पति के रूप में एक राक्षस है। उसका शारीरिक-मानसिक शोषण करता है। दिन-रात शराब के नशे में धुत रहकर गाली-गलौच करता है, उसे मारता-पीटता है। पुनिया के जेवर, घर के बर्तन बेचकर शराब पी जाता है। उससे बार-बार शराब पीने के लिए पैसे माँगता है। इसके लिए वह अपना घर भी गिरवी रख देता है। हद तो तब हो जाती है जब वह पुनिया को अपने शराबी दोस्तों के साथ शारीरिक संबंध बनाने पर विवश कर उसको वेश्या बनाना-चाहता है। वह अपने दोस्तों को शराब पिलाने के लिए अपने घर लाता है, उन्हें पुनिया के पास भेजता है ताकि देह-व्यापार से अर्जित धन को पुनिया लेकर वह शराब पी सके। जब पुनिया यह सब करने से मना कर देती है तो वह अपनी पत्नी पर ही यह आरोप लगाते हुए प्रताड़ित करता है। पुनिया उसके दोस्तों पर डोरे डालती है। पुनिया वहाँ किसी तरह अपनी इज्जत बचाकर अपने पिता के घर आती है। पिछले छह महीनों से यहीं रह रही है। यहाँ आने पर लकवाग्रस्त माँ पिछले छह महीने तक बीमार रहते-रहते पैसों के अभाव में इलाज नहीं हो पाने के कारण दम तोड़ देती है। पिता बिल्कुल बेबस और लाचार हैं। पुनिया ने जातीय पंचायत में अपने पति दुरजन से तलाक लेने की अर्जी दी हुई है। लेकिन वह उसे तलाक लेने नहीं दे रहा है। उसने पंचों को शराब पिला-पिलाकर अपने पक्ष में कर लिया है और उस पर अपने साथ चलने का दबाव डालता रहता है। पुनिया निर्णय करती है कि यदि उसे तलाक नहीं मिलता है तो वह इस स्थिति में आत्महत्या कर लेगी, परंतु कभी उस दुरजन दुराचारी पति के साथ नहीं जाएगी। देह-व्यापार करने से बेहतर वह आत्महत्या को समझती है।

पुनिया अपने बचपन के प्रेमी प्रभात से अपने गौने के पाँच साल बाद मिलती है, तो ये तमाम बातें अपने जीवन की बताती है। प्रभात उसके बचपन का साथी है, प्रेमी है। पुनिया के माता-पिता की दृष्टि में वह एक अच्छा और संस्कारी लड़का है। पुनिया भी उससे बहुत प्रेम करती है, गौना होने से पहले वह अपनी माँ के समक्ष अपने प्रेम को जाहीर करते हुए प्रभात से शादी करने की इच्छा व्यक्त की थी, परन्तु माँ ने उसे दूसरी जाति का होने की बात करके पुनिया को समझाती है कि अपना समाज उसे कभी स्वीकार नहीं करेगा। उसे भूलने में ही तुम्हारी भलाई है।

प्रभात पढ़ा-लिखा, समझदार, संस्कारी एवं अच्छी सोच रखने वाला व्यक्ति है। यह कारण है कि वह पुनिया से दो वर्ष गौना टाल कर उसे अपनी पढ़ाई पूरी करने का आग्रह करता है, लेकिन विवाह बंधन में बंधी व्याहता का गौना ससुरालवाले जल्दी-जल्दी करवाने की जिद्द पर अड़े हुए थे। पुनिया भी कम से कम हायर सेकेंडरी तक पढ़ना चाहती थी, लेकिन उसकी पढ़ाई ससुरालवालों ने आठवीं कक्षा के बाद रुकवा दी क्योंकि उसका पति केवल चौथी कक्षा तक पढ़ा था। प्रभात पुनिया की सारी व्यथा-कथा सुनकर वह उसके समक्ष उससे विवाह करने का प्रस्ताव रखता है। वह उससे वचन लेता है कि वह अपने भरण-पोषण हेतु

कभी किसी की मेहनत-मजदूरी नहीं करेगी। प्रभात उसे हर तरह से आर्थिक सहयोग करने, उसके पिता को शहर ले जाकर आजीवन सेवा करने, पुनिया से कोर्ट मैरिज करने का प्रस्ताव भी रखता है। साथ ही यह भी पुनिया को बताता है कि पुनिया की अतिरिक्त किसी और से विवाह नहीं करेगा, अन्यथा कुवाँरा ही रहेगा। उसकी प्रेम भरी बातें सुनकर पुनिया कहती है में भी तुमसे उतना ही प्रेम करती हूँ जितना तुम मुझे करते हो। मैं हमेशा भावनात्मक रूप से तुम्हारी थीं, आज भी हूँ और भविष्य में भी हमेशा रहूँगी। यदि यह समाज हमें विवाह करने की अनुमति नहीं देगा तो मैं भी दूसरा विवाह नहीं करूंगी। पुनिया, प्रभात निश्चल प्रेम से अनिभूत है, परंतु इस आंतरजातीय विवाह के बाद अपनी जातीय पंचायत के कठोर निष्ठुर निर्णय, तानाशाही फ़रमानों से भी वह भली-भांति परिचित है।

इधर पुनिया से किसी भी कीमत पर विवाह कराने के लिए कल्लू सेठ गाँव के सरपंच पर दबाव बनता है और सरपंच तमाम दाँवपेच खेलकर पुनिया का उसके पति दुरजन से तलाक करवाता है। पुनिया अपने नीच पति से गुजारा भत्ता लेने से भी इनकार करती है। इसके बाद पंचायत में दूसरी अर्जी पर सुनवाई होती है, जो कल्लू सेठ द्वारा दी गई होती है, जिसमें पुनिया के पिता संतोषी किसान द्वारा पाँच वर्ष बाद भी रेहन पर रखी जमीन नहीं छुड़वा पाने और लिए गए पाँच हजार का कर्ज सूद समेत तीस हजार हो जाने पर उसकी कर्ज अदायगी कैसे होगी, इस मुद्दे को पंचायत में उठाया जाता है। पाँच साल बाद जमीन नहीं छुड़वा पाने की स्थिति में महाजन के कानून के हिसाब से उस जमीन का मालिकाना अधिकार अब संतोषी का नहीं रहा। अत: संतोषी किसान की जमीन का मालिक अब सेठ कल्लू हो गया। पाँच साल पहले लिए गए पाँच हजार रुपये अब सूद समेत तीस हजार रुपये हो गये थे, उसकी अदायगी कैसे होगी, इस मुद्दे पर चर्चा होती है। संतोषी अपनी असमर्थता व्यक्त करता है, परिस्थितियों का हवाला देते हए थोड़े समय की मोहलत माँगता है। कल्लू सेठ एक शर्त पर समय देने को तैयार होता है की यदि संतोषी किसान अपनी तलाकशुदा बेटी पुनिया का विवाह उसके साथ कर दे, पुनिया द्वारा कल्लू सेठ के प्रस्ताव को स्वीकार न करने पर वह उसे लालच देता है कि वह उसके पिता का सारा कर्ज माफ कर देगा, साथ ही रेहन पर रखी गई जमीन पर उसे लौटा देगा। वह पुनिया को चेतावनी भी देता है यदि वह उसके प्रस्ताव को नहीं स्वीकार करती है तो कर्ज अदा न कर पाने के कारण संतोषी किसान को जेल भी जाना पड़ सकता है। संतोषी किसान को जेल जाना स्वीकार है, परंतु उसे इस अनमेल विवाह की शर्त मंजूर नहीं है। कल्लू सेठ साम-दाम-दंड-भेद की नीतियों के माध्यम से पुनिया को अपनाना चाहता है।

सरपंच दोनों पक्षों को अपनी जिद्द पर अड़ा देखकर पूर्व निर्धारित योजना के तहत हस्तक्षेप करता है। वह एक षडयंत्र रचता है। अपने पास रखे झोले में उसने पहले से ही एक 'काला-पत्थर' डाल दिया था। पुन: गावँ वालों को दिखाकर जमीन पर पड़े एक काले और एक सफेद पत्थर को उस झोले में डालने का अभिनय करता है। हाथ में लिए दोनों पत्थरों में से 'काला-पत्थर' सबको दिखाकर झोले में डालता है, लेकिन सफेद पत्थर को धोखे से सबको नजर से बचाकर अपने पास ही रख लेता है और इसके बाद पुनिया से कहता है कि अब तूम आँख मूँदकर दूसरी तरफ देखते हुए, झोले में से एक पत्थर निकालो। यदि सफेद पत्थर निकला है, तो तुम्हें कल्लू सेठ से विवाह नहीं करना पड़ेगा और तुम्हारे बापू का सारा कर्ज माफ हो जायेगा। लेकिन यदि तुमने काला पत्थर निकाला तो तुम्हें सभी के सामने अभी

कल्लू सेठ से विवाह करना होगा और तुम्हारे बापू द्वारा लिया गया सारा कर्ज माफ हो जायेगा। सरपंच पुनिया को लालच देते हुए कहता है कि चाहे कोई पत्थर निकले तुम्हारे बापू का कर्ज माफ होना निश्चित है। हाँ, यदि विधाता ने तुम्हारा विवाह कल्लू सेठ से लिखा होगा तो काला पत्थर निकलेगा और यदि नहीं लिखा होगा तो सफेद निकलेगा। अब तो तुम्हें कोई एतराज नहीं होगा। पुनिया थोड़ा सोचने का समय माँगती है।

पुनिया इन जालिमों के छल-प्रपंच की भली-भाँति भाँप जाती है। उसे पूरा विश्वास है कि झोले में डाले गये दोनों ही पत्थर काले हैं। सरपंच की इस साजिश को समझते हुए वह विचार मंथन करती है, पुनिया अपनी जिंदगी को दाँव पर लगाकर अपने पिता की जमीन बचाने और कर्ज माफ करवाने का विकल्प ढुँढती है। वह पत्थर निकालने से पहले तलाक मंजूरी और अपने बापू के कर्ज माफी का कागजात माँगती है। सरपंच सारे कागजात पुनिया को देता है। अंत में वह पत्थर निकालने का निर्णय लेती है। वह झोले से एक पत्थर निकालकर बहुत होशियारी से नीचे जमीन पर गिरा देती है, जिससे वह पत्थर काला-सफेद पत्थरों में मिल जाता है। जब वह दूसरी बार पत्थर निकाल कर साबित करना चाहती है कि पहले पत्थर का रंग क्या रहा होगा, तो कल्लू सेठ और सरपंच विरोध करते हैं, मगर ग्राम वासियों के समर्थन और अपनी सूझ-बुझ से वह झोले में से दूसरे काले पत्थर को निकालकर यह साबित कर देती है कि जमीन पर गिरने वाला पहला पत्थर सफेद ही था। इस प्रकार वह अपनी अप्रतिम सूझ-बुझ, समझदारी तार्किकता और बुद्धिमता का परिचय देते हुए अपने पिता को कर्ज मुक्त बनाती है तो स्वयं को भी अनमेल विवाह के चंगुल से बचाती है। उसके कृत्य द्वारा पिता के मन से समाज का डर निकल जाता है तो वहीं उसका प्रेमी प्रभात भी उसकी बुद्धिमानी का कायल हो जाता है।

इस प्रकार 'काला-पत्थर' नाटक में नाटककार डॉ. सुरेश शुक्ल 'चन्द्र' ने विवाह संबंधी अनेक त्रासदीपूर्ण स्थितियों को प्रसंगानुसार अत्यंत सजीवता, सहजता एवं सरलता से उभारा है। बाल विवाह, अनमेल विवाह, अंतरजातीय विवाह, दहेज प्रताड़ना, स्त्री पड़ताना, संबंधी तमाम समस्याओं, विसंगतियों के माध्यम से समाज में सजगता, सतर्कता, जागरूकता फैलाने का सफल प्रयास किया है। इस तरह इस नाटक में विवाह और प्रेम से संबंधित अनेक विडंबनाओं, त्रासदियों को बड़ी शिद्दत और संजीदगी से उठाया गया है।

३.४ सारांश

'काला पत्थर' नाटक के माध्यम से नाटककार ने पात्रों के माध्यम से किसानों-श्रमिकों के साथ होने वाले शोषण का सजीव चित्रण किया है तो वहीं सूदखोर साहकारों, पुलिस, न्याय के ठेकेदारों, धार्मिक पाखंडता को भी चित्रांकित करने में सफलता मिली है। नाटक में विवाह संबंधी अनेक त्रासदियों को अत्यंत सजीवता से उभारा है। बाल-विवाह, दहेज, अनमेल विवाह, स्त्री पड़ताना, नशे के कारण पारिवारिक कलह आदि मुद्दों की तरफ समाज का ध्यान आकर्षित किया है। विवाह स्त्री-जीवन या लड़कियों का अंतिम सत्य नहीं है, जिसकी वजह से उनकी शिक्षा रुकवा दी जाती है, उन्हे शराबी, जुआरी व्यभिचारी पुरुषों से व्याहकर, माँ-बाप दायित्व से मुक्ति पाना चाहते हैं। लड़कियों को अपने विवाह एवं वर चुनने का कोई हक नहीं है। इस नाटक में विवाह और प्रेम संबंधित समाज में व्याप्र विसंगतियों-विडम्बनाओं और विकृतियों का यथार्थ चित्रण हुआ है।

३.५ लघूत्तरीय प्रश्न

प्र.१. संतोषी किसान का ५००० रु पाँच वर्ष बाद सूद समेत कितना हो जाता है?

उ. ३०,००० रुपये हो जाता है।

प्र.२. सरपंच कल्लू सेठ को विवाह कराने के लिए क्या खर्च बताता है?

उ. सरपंच कल्लू सेठ को २५,००० और पूरी जमात को भोजन कराने का खर्च बताता है।

प्र.३. माँ के अनुसार प्रभात और पुनिया का विवाह क्यों संभव नहीं था।

उ. प्रभात के दूसरी जाती का होने के कारण विवाह संभव नहीं था।

प्र.४. खोदवा चोर ने अपना नाम क्या रखा है?

उ. खोदवा चोर ने अपना नाम आचार्य शंकरानंद रखा था।

प्र.५. सरपंच दुर्जन को पुनिया को कितने रुपये गुजारा भत्ता देने को कहते है?

उ. दुर्जन को १००० रु गुजारा भत्ता देने को कहते है।

प्र.६. सरपंच के झोले में किस रंग का पत्थर पहले से था?

उ. काले रंग का।

प्र.७. झोले में से यदि पुनिया सफेद रंग का पत्थर निकालती तो उसे शर्त के अनुसार क्या करना होगा?

उ. पुनिया शादी के बंधन से स्वतंत्र हो जाती और पिता का कर्ज माफ हो जाता।

प्र.८. साधु कल्लू सेठ को कितने दिन तक पीपल के पेड़ के नीचे दी जलाने को कहता है?

उ. २१ दिन तक।

३.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न

प्र.१. 'काला पत्थर' नाटक की कथावस्तु अपने शब्दों में लिखिए।

प्र.२. 'काला पत्थर' नाटक के मूल कथ्य की विवेचना कीजिए।

प्र.३. 'काला पत्थर' नाटक की विषय-वस्तु पर प्रकाश डालिए।

प्र.४. 'काला पत्थर' नाटक में चित्रित वैवाहिक त्रासदी पर प्रकाश डालिए।

munotes.in

३.७ संदर्भसहित व्याख्या

"धैर्य की भी कोई सीमा होती है। में एक राक्षस की पत्नी हूँ। क्या नहीं किया उसने मेरे साथ? मुझसे घृणित कार्य कराने के लिए गौना कराया था।"

संदर्भ:

प्रस्तुत पंक्तियाँ 'काला पत्थर' नाटक से उद्धृत है। इसके लेखक डॉ. सुरेश शुक्ल 'चन्द्र' है।

प्रसंग:

पुनिया यह बाते अपने दुराचारी पति के बारे में अपने बचपन के प्रेमी प्रभात से कह रही है, जिससे वह अपने गौने के पाँच साल बाद मिली है।

व्याख्या:

पुनिया जब अपने गौने के पाँच साल बाद अपने बचपन के प्रेमी से मिलती है, अपने ऊपर आपबीती को प्रभास को सुनाती है कि कैसे गवने के बाद उसे पति का अत्याचार उसके ऊपर होता है। उसका मानसिक-शारीरिक शोषण होता है। पति दिन-रात शराब के नशे में धुत रहकर गाली-गलौच, मार-पीट करता है। पुनिया के जेवर, घर के बर्तन बेचकर शराब पी जाता है। अपना घर भी गिरवी रख देता है। हद तो तब हो गई जब वह अपने शराबी दोस्तों से शारीरिक संबंध बनाने पर विवश कर उसे वेश्या बनाना चाहता है। उससे धंधा करवाकर उसे अपनी आमदनी का जरिया बनाना चाहता है। वह कहती है कि वह तलाक न मिलने पर आत्महत्या कर लेगी, परंतु कभी उस दुरजन दुराचारी पति साथ नहीं जाएगी। देह-व्यापार करने से अच्छा वह आत्महत्या को समझती है। इस बात पर उसका प्रेमी प्रभात उसे धैर्य रखने की बात कहता है, तो पुनिया कहती है कि धैर्य की भी कोई सीमा होती है।

विशेष:

१) अनमेल विवाह संबंधी अनेक त्रासदीपूर्ण स्थितियों का अत्यंत सजीवता, सहजता एवं सरलता से दर्शाया गया है।

२) नशे के प्रभाव से होनेवाली हानियों को बताया गया है।

३) भाषा सरल और सहज है।

३.८ संदर्भ ग्रंथ

१) काला पत्थर - डॉ. सुरेश शुक्ल 'चंद्र'

२) नयी सदी: नये नाटक – डॉ. अर्जुन जानु घरत

३) माधवी - भीष्म साहनी

४) ध्रुवस्वामिनी - जयशंकर प्रसाद

*****

munotes.in

४

'काला पत्थर' नाटक: चरित्र-चित्रण

इकाई की रूपरेखा

४.० इकाई का उद्देश्य

४.१ प्रस्तावना

४.२ 'काला पत्थर' : चरित्र चित्रण

४.४ सारांश

४.५ लघूत्तरीय प्रश्न

४.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न

४.७ संदर्भ ग्रंथ

४.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई का मुख्य उद्देश्य है 'काला पत्थर' नाटक के सभी पात्रों के संबंध में विद्यार्थियों को संपूर्ण जानकारी देना। कथा साहित्य को सफलता के चरम तक पहुँचने में उसके पात्र का चरित्र अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। ये पात्र ही अपने समस्त गुणों-अवगुणों, क्रिया-कलापों, कर्मों, आदर्शों समेत सभी मानवीय प्रवृत्तियों से कथा को आगे बढ़ाते है। इसलिए नाटक के पात्रों का चरित्र-चित्रण पर प्रकाश डालना इस इकाई का मुख्य उद्देश्य है।

४.१ प्रस्तावना

डॉ. सुरेश शुक्ल 'चन्द्र' द्वारा लिखित नाटक 'काला पत्थर' अप्रैल २०१२ में लिखा गया है। यह नाटक ग्रामीण जीवन की समस्याओं पर आधारित है। इस नाटक में शोषण की पराकाष्ठा पार कर गई है। हर तरह से लाचार मजबूर शोषत किसानों की दयनीय दशा को अत्यन्त मार्मिकता और संवेदना से उकेरा गया है। नाटक में स्त्री विषयक समस्याओं जैसे बाल-विवाह, अनमेल विवाह, पत्नी प्रताड़ना जैसे मुद्दों को उकेरा गया है। पुनिया नाटक की मुख्य पात्रा है, जो स्त्री समाज की पत्नी प्रताड़ना महिलाओं का प्रतिनिधित्व करती है। पुनिया के पिता संतोषी हर तरह से लाचार, मजबूर शोषित किसानों का प्रतिनिधित्व करता है। कल्लू सेठ शोषण की पराकाष्ठा पार कर सूदखोर महाजन है जो पुत्र की लालच में साठ वर्ष की उम्र में शादी करने की इच्छा रखता है। सेठ कल्लू की पत्नी विमला पत्नी प्रताड़ना एवं स्त्री दासता के रूप में नाटक में उभर कर आती है। पुनिया का प्रेमी प्रभात नए सामाजिक मूल्यों का प्रतिनिधित्व करता नजर आ रहा। इस नाटक में कुछ ऐसे पात्र हैं, जो अपनी-अपनी भूमिका से नाटक को निरंतर गतिशील बनाए रखे हैं।

munotes.in

४.२ 'काला पत्थर': चरित्र-चित्रण

'काला पत्थर' नाटक के प्रमुख पात्रों का चित्रण निम्नलिखित है -

१) पुनिया:

पुनिया 'काला पत्थर' नाटक की मुख्य पात्र है। वह गरीबपुर गावँ के गरीब किसान संतोषी की एकलौती बेटी है, पाँच वर्ष की उम्र में उसका विवाह हो जाता है। आठवीं पास करते-पन्द्रह वर्ष की आयु में गौना हो जाता है। उसे आगे पढ़ने की बहुत इच्छा भी, वह बारहवीं तक पढ़ना चाहती थी। चुकि इसका पति दुरजन चौथी ही पास था तो आगे पढ़ने से उसे रोक दिया जाता है। पिता संतोषी कल्लू सेठ के पास अपनी जमीन जायदाद सब कुछ गिरवी रखकर पाँच हजार रुपया कर्ज लेकर बेटी का गौना करता है। ससुराल जाने पर पुनिया को पता चलता है कि उसका पति, पति के रूप में राक्षस है। पति उसका शारीरिक-मानसिक शोषण करता है। दिन-रात शराब के नशे में डूबा रहता। पुनिया के जेवर, घर बर्तन बेचकर शराब पी जाता है। उससे बार-बार शराब पीने के लिए पैसे माँगता, मार-पीट करता है। हद तो तब हो गई जब वह अपने शराबी दोस्तों के साथ पुनिया को शारीरिक संबंध बनाने को विविश करता। वह उसे वेश्या बनाकर धन अर्जित करना चाहता है, ताकि उस पैसे से शराब पी सके। यहीं नहीं, वह पुनिया पर यह आरोप भी लगाता था कि वह उसके दोस्तों पर डोरे डालती है। पुनिया वहाँ से किसी तरह अपनी इज्जत बचाकर अपने पिता के पास आ जाती है। पिछले छह महीने से अपने पिता के घर पर रह रही है। यहाँ आने पर अपनी लकवा ग्रस्त माँ की सेवा करती है, मगर पैसों के अभाव में सही इलाज न हो पाने के कारण उन्हें नहीं बचा पाती। जातीय पंचायत में वह अपने पति दुरजन से तलाक लेने की अर्जी दी हुई है। लेकिन उसका पति पंचों को शराब पिला-पिला कर तलाक नहीं होने देता है, उस पर अपने साथ चलने का दबाव डालता रहता है। पुनिया अपनी इज्जत और आत्मसम्मान की रक्षा के लिए तलाक न मिलने पर वह आत्महत्या कर लेगी। वह देह-व्यापार करने से बेहतर आत्महत्या को समझती है।

पुनिया जब अपने गौने के पाँच साल बाद अपने बचपन के प्रेमी प्रभात से मिलती है, तो अपनी सारी व्यथा-कथा सुनाती है। प्रभात पुनिया के सामने विवाह करने का प्रस्ताव रखता है, परंतु पुनिया अंतरजातीय विवाह के बाद अपनी जातीय पंचायत के कठोर, निष्ठुर निर्णय, तानाशाही फरमानों से वह भली-भांति परिचित है, इसलिए वह समाज की रूढ़िगत रिवाजों-परंपराओं के समक्ष अपने सपनों-अरमानों को कुर्बान कर देती है। उसे लगता है कि तथाकथित समाज का सामना करने की उसमें शक्ति नहीं है। वह प्रभात से बहुत प्रेम करती है। प्रभात को बताती है कि वह भावनात्मक रूप से हमेशा तुमसे जुड़ी हुई थी, आगे भी जुड़ी रहेगी। अगर भविष्य में उनका विवाह नहीं होगा, तो वह भी दूसरा विवाह नहीं करेगी।

इधर कल्लू सेठ पुनिया से किसी भी कीमत पर विवाह करके लड़का पैदा करने की चाह रखता है। वह संतोषी किसान पर अपने कर्ज का दबाव बनाते हुए पुनिया से विवाह का प्रस्ताव रखता है। बदले में उसके पिता के पुराने सारे कर्जे माफ करने, उनकी जमीन वापस लौटाने का प्रलोभन देता है। पुनिया और संतोषी दोनों में से कोई तैयार नहीं होते है। अब थक हार कर कल्लू सेठ गावँ के सरपंच पर दबाव बनाता है। सरपंच सबसे पहले दाँव पेच

खेलकर दुरजन से उसका तलाक करवाता है। पुनिया अपने नीच पति से गुजारा भत्ता लेने से इनकार करती है। नाटक के अन्तिम भाग वह किस प्रकार से अपनी सूझ-बुझ परिचय देते हुए सरपंच के जाल से बच निकलती है। पुनिया सरपंच की साजिश समझते हुए विचार मंथन करती है। वह अपनी जिंदगी दाँव पर लगाकर अपने पिता की जमीन बचाने और कर्ज माफी करवाने का रास्ता चुनती है। यहीं नहीं पत्थर निकालने से पूर्व वह अपने पिता के कर्ज माफी का कागज और तलाक मंजूरी का कागजात माँगती है। अन्त में वह अपनी तार्किकता और बुद्धिमत्ता का परिचय देते हुए अपने पिता को कर्ज मुक्त बनाती है, तो अपने को भी अनमेल विवाह से बचाती है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है पुनिया असीम धैर्यवान, सच्चा प्रेम करवाने वाली, सतर्क, जागरूक, दूरदर्शी, सुझ-बुझ रखनेवाली प्रगतिशील विचारों की है। नाटककार ने पुनिया के चरित्र को अत्यन्त कुशलता से गढ़ा है, जो नाटक को और अधिक जीवनता, सजीवता और यथार्थता प्रदान करता है।

२) कल्लू सेठ:

'काला-पत्थर' नाटक में कल्लू सेठ शोषक वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। कल्लू सेठ निहायत निर्दयी और स्वार्थी प्रवृत्ति का पात्र है। वह स्त्री-जीवन को खिलौने के अतिरिक्त कुछ नहीं समझता है। नाटक के प्रारंभ में वह संतोषी किसान को पाँच सौ रुपए, उसकी बीमार पत्नी के इलाज के लिए इसलिए नहीं देता कि उसके पास रेहन रखने के लिए कुछ नहीं था। लेकिन जब गाँव का सरपंच दस हजार रुपए माँगता है, तो तुरंत अपनी तिजोरी से निकाल कर दे देता है, रेहन के बारे में पूछता थक नहीं है। यही नहीं संतोषी किसान की बेटी पुनिया से बेटे की चाहत में विवाह संबंध बनाने के लिए सरपंच को पूरे पच्चीस हजार रुपए और पूरी जमात को भोज देने का वादा करता है। जब उसकी पत्नी विमला उसे समझाने की कोशिश करती है, तो उसे भी भला-बुरा कहता है। विमला की किसी राय-परामर्श को वह आत्मसात नहीं किया। छह बेटियों का पिता होने पर भी उसे यही चिंता रहती थी कि कौन मुखाग्नि देगा, कौन पितरों को पानी देगा। वह अपनी बेटियों को हमेशा पराया धन समझता था। दहेज देना पड़े इसलिए चार बेटियों की शादी उनसे दूनी उम्र के द्विजहा वृद्ध पुरुषों से किया। चार में से तीन विधवा हो गई, चौथी लड़की ससुराल की अत्याचार को न सह पाने के कारण आत्महत्या कर लेती है। उसकी एक लड़की कुँवारी ही घर से भाग गयी, तो एक अभी तक कुँवारी बैठी है। लाखों रुपये का मालिक होने के बावजूद वह इस धन उपयोग बेटियों के जीवन को सँवारने, सुखमय बनाने के लिए नहीं करता है। बेटियों के साथ जो उसने किया वह तो जगजाहिर था, परंतु अपनी पत्नी को भी कुछ नहीं समझता था वह अपनी पत्नी को कभी जूते-चप्पलों-डंडों से, तो कभी घर को अन्य वस्तुओं से मारता-पीटता है।

पुत्र प्राप्ति की अभिलाषा में वह अपनी जीवन संगिनी विमला, तीन विधवा और दो बिन व्याही जवान बेटियों की परवाह किये बिना अपनी साठ वर्ष की आयु में अपनी जाती-बिरादरी की बीस वर्षीय एक सुंदर नवयुवती जो कि उसकी बेटी के उम्र के बराबर है उससे विवाह करना चाहता है, ताकि उससे बेटा पैदा कर सके। इसके लिए वह अच्छा-खासा खर्च भी करने की तैयार है। वह अपने विवाह का प्रस्ताव लेकर संतोषी किसान के पास जाता है। विवाह के बदले में वह उसकी जमीन लौटाने तथा सभी पुराने कर्जे माफ करने का प्रलोभन

देता है। जब पुनिया और उसके पिता उसकी कोई भी शर्त नहीं मानते है तो वह सरपंच पर दबाव बनाता है। सरपंच तमाम दाँवपेच खेलकर पुनिया का उसके पति दुरजन से तलाक करवाता है और फिर एक षडयंत्र के चाल में पुनिया को घेरने की कोशिश करता है, मगर पुनिया अपनी सूझ-बुझ, समझदारी और बुद्धिमता से उनके चंगुल से बच जाती है। पुनिया अपने पिता को कर्ज मुक्त कराती है तो अपने आप को भी अनमेल विवाह के चंगुल से बचाती है। इस प्रकार कल्लू सेठ को पैसे, जमीन भी वापस करनी पड़ती है और विवाह का सपना सपना ही रह जाता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है सेठ कल्लू का चरित्र नाटक में निष्ठुर, संवेदनहिन, मौका परस्त, गरीबों का शोषण करनेवाला, पुरानी मानसिकता रखने वाला, धूर्त-बेईमान, कंजूस आदि अवगुणों से भरा हुआ दिखाया गया है।

३) विमला:

विमला नाटक में गौण स्त्री पात्रा के रूप में उभर कर हमारे समक्ष आती है। वह अत्यंत समजदार, दूरदर्शी, विवेकशील, सजग और प्रगतिशील विचारधाराओं की है। वह अपने भ्रष्ट पति कल्लू सेठ अपनी तार्किकतापूर्ण बातों से सच्चाई, ईमानदारी के मार्ग पर चलने को प्रेरित करती है कि उसे गरीबों का खून नहीं चूसना चाहिए। सेठ कल्लू कभी विमला की राय-परामर्श को महत्व नहीं देता था। विमला नहीं चाहती थी कि उसकी छह संताने हो, लेकिन कल्लू सेठ को बेटे की चाहत ने उन्हें छह बेटियों का बाप बन जाता है। कल्लू सेठ बेटियों को पराया धन मानते थे। उनकी इस मानसिकता को बदलने के लिए विमला उन्हें बहुत समझाती है कि यह तुम्हारी पुरानी सोच है, आजकल लड़के-लड़कियों में कोई भेद नहीं है। विमला अपने बेटियों के जीवन में जो कुछ भी त्रासदपूर्ण घटनाएँ घटी है, उन सबका मात्र दोष, अपने पति को मानती है। धन खर्च न करना पड़े, इस कारण कल्लू सेठ अपनी चार लड़कियों का विवाह दूनी उम्र के द्विजहा लड़कों से कर देते है। तीन विधवा हो जातीं है, एक आत्महत्या कर लेती है। उसे लगता है कि लाखों रुपये रखकर क्या फायदा, जो बच्चियों का जीवन सुखमय न हुआ तो। उसमें जवानी में वैधव्यता काटती बेटियों की पीड़ा देखी नहीं जाती।

नाटककार कल्लू सेठ की पत्नी के माध्यम से समस्त भारतीय समाज के पतियों की कड़वी सच्चाई उजागर करते है कि विवाह के लिए लालायित पुरुष विवाह हो जाने पर उसी पत्नी की साधिकार मारते-पीटते है। पति की स्वतंत्र सत्ता के सामान पत्नी की भी अपनी स्वतंत्र सत्ता, अपने स्वतंत्र विचार-सुझाव, राय-परामर्श निर्णय लेने की स्वतंत्रता होनी चाहिए।

४) प्रभात:

प्रभात नाटक में गौण पुरुष पात्र के रूप में उभकर आया है। वह पुनिया के बचपन का प्रेमी है, साथी है। वह एक अच्छा और संस्कारी लड़का है। हायर सेकेण्डरी पास करने के बाद उसे रायपुर में नौकरी मिल जाती है। पिता की मृत्यु के बाद सौतेली माँ और सौतेले भाईयों का व्यवहार उसके प्रति अच्छा नहीं था। अत: वह ज्यादातर रायपुर में ही रहकर जीवन काट रहा था। वह पुनिया से उसके गौने की पाँच साल बाद मिलता है। पुनिया उससे अपने दुराचारी पति के बारे में बताती है, तो वह उसे समझता है कि मैंने तुमसे दो वर्ष गौना टालने

आग्रह किया था। वह पुनिया को कम से कम हायर सेकेण्डरी तक पढ़वाना चाहता था। पुनिया की सारी व्यथा-कथा सुनकर वह उसके समक्ष विवाह करने का प्रस्ताव रखता है। उससे वचन लेता है कि वह अपने भरण-पोषण हेतु कभी किसी की मेहनत-मजदूरी नहीं करेगी। प्रभात उसे हर तरह से आर्थिक सहयोग करने, उसके और उसके पिता को शहर ले जाकर आजीवन सेवा करने, पुनिया से कोर्ट मैरिज करने का प्रस्ताव भी रखता है। वह पुनिया के अतिरिक्त किसी और से विवाह नहीं करेगा, अन्यथा कुवाँरा ही रहेगा। वह हमेशा पुनिया के भले के बारे में सोचता रहता है। जब दुरजन पुनिया के घर, उसे ले जाने के लिए झगड़ा करता है, तो वह पुलिस को पचास रुपये देकर भेजता है और वहाँ से हटाता है। वह सरपंच से पुनिया के तलाक के बारे में भी बात करता है।

इस प्रकार हम देखते है कि प्रभात नाटक में एक युवा सोच रखने वाला पात्र है। वह पढ़ा-लिखा समझदार, संस्कारी लड़का है। वह पुनिया को सच्चे मन से प्यार करता है। उसे समाज के रूढ़िगत रिवाजों-परंपरा की परवाह नहीं है।

४.४ सारांश

सारांश के रूप में कहा जा सकता है कि 'काला-पत्थर' नाटक के पात्र अपने अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। समस्त पात्र मानवीय गुण-दोषों के साथ प्रस्तुत हैं। खल पात्र के गुणों को उतना ही महत्व देते हैं जितना कि मुख्य पात्र के गुणों को चित्रांकित करते हैं। पाठकों के हृदय में किसानों, स्त्रियों के प्रति गहरी संवेदना, सहानुभूति और सहृदयता की भावना जग सके। अत: कहा जा सकता है कि नाटककार ने पात्रों को अपनी समस्त विशिष्टताओं के साथ हमारे सामने प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है।

४.५ लघूत्तरीय प्रश्न

प्र.१ पंचायत वाले सब भ्रष्ट हैं थोड़े से पैसे और शराब की बोतल में बिक जाते हैं"- यह किसका कथन है।

उ. संतोषी का कथन है।

प्र.२ कल्लू सेठ संतोषी के सामने कर्ज माफ करने का प्रस्ताव किस लिए रखता है?

उ. पुनिया से अपनी शादी के लिए।

प्र.३ साधु कल्लू सेठ से कितने रुपए लेता है?

उ. २१०० रुपए देता है।

प्र.४ दुरजन को पकडने के लिए किसने पुलिस को भेजा था?

उ. प्रभात ने।

प्र.५ गावँ के नवयुवक कौन सी समिति बनाकर गाँव के भ्रष्टाचार सुधार कर रहे थे?

उ. ग्राम-सुधार मंडली बनाकर।

प्र.६ खोदता चोर ने कहाँ जाकर सिद्ध बाबा से दीक्षा ली है?

उ. वाराणसी जाकर दीक्षा ली है।

४.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न

प्र.१ 'काला पत्थर' नाटक का प्रमुख पात्र कौन है? उसके चरित्र पर प्रकाश डालिए।

प्र.२ 'काला-पत्थर' नाटक की मुख्य स्त्री पात्र कौन है? उसके चरित्र को अपने शब्दों के लिखिए।

प्र.३ कल्लू सेठ के चरित्र पर प्रकाश डालिए।

प्र.४ प्रभात के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।

४.७ संदर्भ ग्रंथ

१. काला पत्थर - डॉ. सुरेश शुक्ल 'चन्द्र'

२. माधवी - भीष्म साहनी

३. ध्रुवस्वामिनी - जयशंकर प्रसाद

४. गोदान – प्रेमचंद

*****

munotes.in

५

‘काला-पत्थर’ नाटक: कथोपकथन

इकाई की रूपरेखा

५.० इकाई का उद्देश्य

५.१ प्रस्तावना

५.२ 'काला पत्थर' : कथोपकथन / संवाद

५.३ सारांश

५.४ लघूत्तरीय प्रश्न

५.५ दीर्घोत्तरी प्रश्न

५.६ संदर्भ ग्रंथ

५.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई का मुख्य उद्देश्य है, नाटक में आये कथोपकथन अर्थात संवाद के विषय में विस्तृत रूप में बतलाना। नाटक में संवाद का बहुत महत्व है। नाटक में कथोपकथन के माध्यम से ही पात्र अपने भूमिका के अनुसार एक-दूसरे के साथ विचारों, संवेदनाओं का आदान-प्रदान करते हैं, जिससे नाटकीयता आती है। इस इकाई में इन तथ्यों की विस्तृत चर्चा की गई है।

५.१ प्रस्तावना

कथोपकथन वह माध्यम है जिससे किसी रचना में नाटकीयता का दृश्य तैयार होता है, नाटक की कथावस्तु को गति मिलती है। भिन्न-भिन्न चरित्रों के मन की भावों को वाणी मिलती है, जिससे पात्रों का चरित्र उद्घघटित होता है। इस नाटक में ग्रामीण परिवेश को ध्यान में रखकर पात्रों का संवाद भिन्न-भिन्न शैली में प्रस्तुत किया गया है। विषयानूकुल, प्रसंगानुकूल, पात्रानुकूल, स्थानानुकूल भाषा शैली के माध्यम से नाटक का कथोपकथन श्रेष्ठ है।

५.२ काला पत्थर: कथोपकथन / संवाद

‘काला पत्थर’ नाटक पूरी तरह ग्रामीण समस्याओं पर केन्द्रित नाटक है। गाँवों के गरीब किसान कर्ज में डूबे हुए हैं। सूदखोर महाजन किसानों का अनेक प्रकार से शोषण कर रहा है। शासन तंत्र भी भ्रष्टाचार में पूरी तरह से डूबा हुआ है और महाजन का साथ दे रहा है। नाटक में शोषण की पराकाष्ठा पार कर सूदखोर महाजन की निहायत स्वार्थपरता और जीर्ण-शीर्ण अवस्था में हर तरह से लाचार, मजबूर, शोषित किसानों की दयनीय दशा को संवादों के माध्यम से अत्यंत मार्मिकता और संवेदना के साथ उकेरा गया है।

munotes.in

नाटक के प्रारम्भ में किसान संतोषी अपनी बीमार पत्नी के इलाज कराने के लिए गाँव के धनाढ्य महाजन कल्लू से गिड़गिडाता हुआ एक हजार रुपये माँग रहा होता तो कल्लू सेठ पूछता है- "रेहन रखने के लिए क्या लाये हो?"

संतोषी किसान डरते हुए कहता है – "अब तो रेहन रखने के लिये कुछ बचा नहीं है। जेवर, घर, जमीन सभी कुछ तो आपके पास रखा है।"

कल्लू सेठ बड़ी निर्दयतापूर्वक कहता है- अब मैं और कुछ नहीं दे सकता।

संतोषी किसान गिड़गिड़ाते हुए कहता है- ऐसा न कहिए सेठजी: पैसा न मिला तो पत्नी मर जायेगी। तबीयत बहुत ज्यादा खराब है। डॉक्टर को दिखाना जरूरी है।"

कल्लू सेठ संतोषी को पैसे नहीं देता है, उसे भगा देता है। मगर गाँव के सरपंच बिना किसी रेहन रखे खुशी-खुशी दस हजार रुपये थमा देता और अपना अहोभाग्य समझता है। सेठ कल्लू सेठ कहता है- "ये लीजिए दस हजार रुपये। मेरा अहोभाग्य कि आप मेरे पास आयें और सेवा का मौका दिया।"

नाटककार ने कल्लू सेठ और उसकी पत्नी विमला के माध्यम से पुरुष प्रधान समाज की मानसिकता को उजागर किया है। नाटककार डॉ. सुरेश शुक्ल 'चन्द्र' कुल्लू सेठ की पत्नी के प्रति कल्लू सेठ के विचारों और वाक्यांशों के माध्यम से समस्त भारतीय पुरुष की सोच-समझ के विषय में बताया है। विमला अपने पति को समझा-बुझाकर सही रास्ते पर लाने की कोशिश करती दिखती है। विमला कहती है- "उनका खून चूस रहे हो। यही दोष है। ईमानदारी से धन्धा करो। नमक के बराबर खाओं। शक्कर के बराबर क्यों खा रहे हो?" यही नहीं वह कुल्लू सेठ को लड़कियों के पराया धन माने जाने का विरोध करते हुए कहती है - "यह तुम्हारा भ्रम है, पुरानी सोच है। लड़के और लड़की में कोई भेद नहीं है। तुम्हारी इसी मानसिकता ने घर को तबाह कर दिया।" इस प्रकार नाटककार विमला के माध्यम से समाज में फैले लड़के-लड़कियों में अन्तर करनेवालों पर कडा प्रहार करता है।

विमला को लगता है, उसके तथा 'उसको छह बेटियों के जीवन में जो कुछ त्रासदपूर्ण घटनाएँ घटी है, उसका एक मात्र दोषी उसका पति है। वह कल्लू सेठ के अनैतिक तरीके से धन संचय से भी नाराज दिखती है। वह कहती है-"पीछे बहुत सारी सम्पत्ति डाकू लूट ले गये थे। उसी में तुम्हारी एक आँख भी फूट गयी। वही पैसा यदि लड़कियों को देते तो डाका क्यों पड़ता और लड़कियां भी सुखी होती।" कल्लू सेठ अपनी पत्नी की प्रगतिशील सोच से कोई फर्क नहीं पड़ता है, उल्टे वह अत्यंत बेरुखी, अभद्रता और आक्रोश में आकार बार-बार धमकी देता हुआ नजर आता है। कल्लू सेठ आज के पुरुष समाज के वर्चस्व करते हुए कहता है "देखो मुँह पर लगाम दो, नहीं तो मेरा पारा भड़क जाएगा। अब तुम हद से आगे बढ़ रही हो।

विमला और कल्लू सेठ के बीच हुए संवाद को नाटककार बड़े ही जीवंतता, सजीवता और व्यावहारिकता से हमारे समक्ष रखा है कि पूरा दृश्य कहीं से काल्पनिक नहीं लगता है। जैसा मनुष्य के साधारणतः दाम्पत्य जीवन में ऐसा ही कुछ चलता रहता है। इस पूरे दृश्य का दृश्यांकन नाटककार सुरेश शुक्लजी ने अत्यंत स्वाभाविक ढंग से किया है। विमला अपनी तीन-तीन जवान विधवा बेटियों, पिता की बेटियों के प्रति बेरुखी देखते-देखते, तमाम तरह

के सामाजिक, पारिवारिक, मानसिक शोषण को सहते-सहते स्वभाव बिल्कुल रूखी, विद्रोही प्रवृत्ति की हो गई हैं। पति के रूखे व्यवहार तथा मानसिक शोषण ने उसे ऐसा बना दिया है।

नाटक में दो पीढ़ी के बीच की अंतराल को उनके सोच-विचार और समझ में आए परिवर्तनों का भी नाटककार सुरेश शुक्ल ने बहुत प्रभावात्पादक अंदाज में उठाया है। ग्राम सुधार की टोली के युवकों द्वारा नाटक के बीच-बीच में आकार गीत के माध्यम से भ्रष्टाचार, शोषण, अन्याय के खिलाफ सभी को एकजुट होने का आवाहन करते हैं -

"उठ जाग मुसाफिर भोर भाई

अब रैन कहाँ जो सोबत है

जो जागत है सो पावत है

जो सोबत है सो खोवत है।"

नाटक में प्रभात के माध्यम से नाटककार एक ऐसे पात्र को स्थान देता है। जो नयी सोच रखनेवाला पढ़ा-लिखा संस्कारी लड़का है तो वह समाज के रूढ़िगत रिवाजों-परंपराओं परवाह नहीं करता है। वह पुनिया से कहता है - "समाज को मारो गोली। समाज ने तुम्हें क्या दिया? बापू के कौन अब लड़का ब्याहने को बैठे है कि समाज को बाँध कर चलें। मैं तुमसे कोर्ट मैरिज करूँगा। तुम्हें कोई कष्ट न होने पायेगा। मेरी बात पर सोचना।"

डॉ. सुरेश शुक्ल 'चन्द्र' कृषक समाज की दुखती रग से भली-भाँति परिचित है कि जानते हैं कि गाँवों के किसान कर्ज में डूबे हुए है। सूदखोर महाजन किसानों का अनेक प्रकार से शोषण कर रहे हैं। सेठ कल्लू कहता है- "कर्ज की शर्तों के अनुसार पाँच वर्ष तक रुपया न अदा कर पाने की हालत में रेहन रखी चीज कर्जदाता की हो जाती है। अब संतोषी की जमीन पर मेरा अधिकार है।" संतोषी की यह पीड़ा समग्र किसानों की पीड़ा है जो सूदखोर साहूकारों के शोषण की अविस्मरणीय गाथा कहती है।

इस प्रकार 'काला पत्थर' नाटक में विभिन्न पात्रों के संवादों से ऐसे अनेक दृष्टांत है जो कथोपकथन की दृष्टि से इस कृति को समृद्ध बनाते है। कथोपकथन बिल्कुल नदी की अविरल धार के समान सतत प्रवाहमान है। नाटक में निरहित कथोपकथन या संवादों का अध्ययन करने के उपरान्त यह कहा जा सकता है कि कथोपकथन की दृष्टि से यह नाटक अत्यन्त सफल, समृद्ध और सार्थक नाटक है।

५.३ सारांश

सारांश के रूप में कहा जा सकता है कि 'काला पत्थर' नाटक ग्रामीण परिवेश की कथा में किसानों के साथ होनेवाले शोषण, अन्याय का अहम दस्तावेज है। नाटककार ग्राम समाज में किसानों, मुजदूरों, दिन-दुखियों के साथ शोषण की बात संवादों के माध्यम से इतनी सरलता, सरसता, सजीवता से हमारे सामने प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है।

munotes.in

५.४ लघूत्तरीय प्रश्न

प्र.१ नाटक की मुख्य नायिका कौन है?

उ. पुनिया है।

प्र.२ “जाओगी यहाँ से कि उठाऊ जूता। अभी सारे लच्छन उतर जायेंगे।” यह कथन किसका है।

उ. कल्लू सेठ का।

प्र.३ नाटक का मुख्य खल पात्र कौन है?

उ. कल्लू सेठ।

प्र.४ सरपंच के झोले में किस रंग का पत्थर पहले से था?

उ. काले रंग का।

प्र.५ साधु कल्लू सेठ के ऊपर से काली छाया भगाने के लिए पहला उपाय क्या बताता है?

उ. कल्लू सेठ को जूते से मारकर।

५.५ दीर्घोत्तरी प्रश्न

प्र. १ ‘काला पत्थर’ नाटक कथोपकथन पर प्रकाश डालिए।

प्र. २ ‘काला पत्थर’ नाटक में निहित संवादों की विवेचना की जिए

प्र. ३ कथोपकथन की दृष्टि से ‘काला पत्थर’ नाटक के महत्त्व पर प्रकाश डालिए।

५.६ संदर्भ ग्रंथ

१. काला पत्थर – डॉ. सुरेश शुक्ल ‘चन्द्र’

२. माधवी - भीष्म साहनी

3. ध्रुवस्वामिनी – जयशंकर प्रसाद

*****

munotes.in

६

‘काला पत्थर’ नाटक: समस्याएँ एवं उद्देश्य

इकाई की रूपरेखा

६.० इकाई का उद्देश्य

६.१ प्रस्तावना

६.२ ‘काला पत्थर’ नाटक की समस्याएँ एवं उद्देश्य

६.३ सारांश

६.४ लघूत्तरीय प्रश्न

६.५ दीर्घोत्तरी प्रश्न

६.६ संदर्भ ग्रंथ

६.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई के मुख्य लक्ष्य यह है कि ‘काला पत्थर’ नाटक में चित्रांकित समस्याओं पर गंभीरता से विचार किया जाए, साथ ही नाटक के मूल उद्देश्य की भी विस्तृत रूप से गहन चर्चा की जा सके।

६.१ प्रस्तावना

मनुष्य जिस परिवेश से जुड़ा होता है उससे संबंधित बाह्य और आंतरिक समस्याओं से घिरा रहता है। हर व्यक्ति के जीवन में कोई न कोई समस्या अवश्य रहती है। इन समस्याओं से जूझनेवाला व्यक्ति हर समाज, हर वर्ग, हर जाति, हर सम्प्रदाय में है। इस नाटक में प्रत्येक पात्र अपनी-अपनी समस्याओं से जूझते नजर आते हैं खासतौर पर किसान, श्रमिक वर्ग और स्त्रियाँ की समस्याएं। अपनी जिन्दगी में लगातार संघर्ष और परिश्रम करते हुए अपनी छोटी-छोटी इच्छाओं-आकांक्षाओं को पूरा करने में असमर्थ नजर आते हैं। नाटक में कुछ ऐसे पात्र है जिन्होंने अपनी स्वार्थपरता की सारी पराकाष्ठाएँ, सारी हदें पार कर दीं, इन तमाम पात्रों के जीवन से जुड़ी समस्याओं को नाटक में उभारना ही नाटककार का मुख्य उद्देश्य है।

६.२ ‘काला पत्थर’ नाटक की समस्याएँ एवं उद्देश्य

‘काला पत्थर’ नाटक सन् २०१२ में प्रकाशित डॉ. सुरेश शुक्ल ‘चन्द्र’ का ग्रामीण समस्याओं पर केन्द्रित नाटक है। गाँवों के गरीब किसान कर्ज में डूबे हुए है। सूदखोर महाजन किसानों का नाना प्रकार से शोषण कर रहे है। किसान हर तरफ से लाचार, मजबूर, शोषित है। शासन तंत्र भी भ्रष्टाचार में डूबा हुआ है और शोषक वर्ग के साथ खडा नजर आ रहा है। नाटक में हमारे ग्रामीण जीवन से सच्चाई, ईमानदारी, नैतिकता, न्याय, समानता जैसे सारे नैतिक मूल्य नदारद हो रहे है। इस नाटक में गाँव की तमाम विसंगतियों, विद्रूपताओं,

munotes.in

विकृतियों और विडम्बनाओं को उजागर करता है। भारतीय समाज में जहाँ एक तरफ किसानों-मजदूरों की जर्जर आर्थिक अवस्था दिन-प्रतिदिन बद से बदतर होती जा रही है, तो वहीं गाँव में निम्न जाति के लोगों के जीवन में कुछ विशेष सुधार नहीं आया है।

भारत देश के ग्रामीण जीवन में देश की आधी आबादी कही जाने वाली स्त्रियों-लड़कियों की दशा अत्यंत त्रासदपूर्ण है। इस नाटक में ग्रामीण स्त्री जीवन में व्याप्त तमाम समस्याओं मसलन बाल-विवाह, अनमेल विवाह, दहेज प्रथा, पत्नी प्रताड़ना, स्त्री दासता जैसे अनेक मुद्दों को उठाया गया है। महिलाओं को भोग विलास की वस्तु समझा गया हैं। महिलाओं को दासतुल्य समझा जाता है। नाटककार ने तत्कालीन जीवन-जगत से जुड़ी अनेक समस्याओं को इस नाटक में चित्रित किया है। साथ ही वह एक ऐसे समाज की संरचना करने की परिकल्पना करते है, जिसमें किसी तरह का कोई भेदभाव-अन्तर न हो, कोई किसी का शोषण न करें, जातिगत-वर्गगत, लिंगगत जैसे तमाम तरह के भेदभाव समाप्त हो जाए। समाज में सभी को समान न्याय मिले, समाज से भ्रष्टाचार समाप्त हो जायें।

'काला पत्थर' नाटक का मुख्य उद्देश्य किसानों के जीवन की समस्याओं, उनके शोषण से संबंधित समस्याओं और उनकी अतिशय दीनता-हीनता से सबको परिचित कराना है। हमारे देश का किसान रात-दिन जी तोड़ परिश्रम करके अन्न उपजाता है, सबको अन्न देता है, खुद कर्ज तले दबा रहता है। वह अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ रहता है। इससे बड़ी विडंबना भला और क्या हो सकती है। गाँव के सूदखोर महाजन किसानों की मानसिक-शारीरिक-आर्थिक शोषण की सारी पराकाष्ठाएँ पार कर चुके है। इसी संदर्भ में कल्लू सेठ संतोषी से कहता है –"अब मैं ज्यादा देर इंतजार नहीं कर सकता। तुम्हें जमीन रेहन रखे हुए पाँच वर्ष से अधिक हो गया है। यदि कोई कर्जदार पैसा नहीं पटाता तो नियम के अनुसार पाँच वर्ष बाद रेहन रखी हुई चीज मेरी हो जाती है फिर मैं उसे बेचूँ या कुछ भी करूँ। इसलिए तुम्हारी जमीन पर अब मेरा अधिकार है। अब तुम उस पर खेती वैगरह नहीं कर सकोगे।"

'काला पत्थर' नाटक में स्त्री-जीवन से जुड़ी अनेक समस्याओं को अत्यंत यथार्थ परकता, रोचकता और संवेदना के साथ रखा गया है । इस नाटक में स्त्रियों के साथ हजारों वर्षों से समाज में हो रहे अत्याचारों को दर्शाया गया है। महाजन कल्लू सेठ के माध्यम से महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों को दिखाया गया है। कल्लू सेठ की पत्नी विमला अपने भ्रष्ट पति को जब सच्चाई, ईमानदारी के मार्ग पर चलने को कहती है तो कल्लू सेठ अत्यंत बेरुखी, अभद्रता और आक्रोश में आकार बार-बार कहता है- "देखो मुँह पर लगाम दो, नहीं तो मेरा पारा भड़क जायेगा" यही उसकी आवाज को दबाने, कुचलने हेतु कल्लू सेठ कहता है- "जाओगी यहाँ से कि उठाऊँ जूता। अभी सारे लच्छन उतार जाएंगे।" "बहुत दिनों से पिटाई नहीं हुई है। इसी से दिमाग चढ़ गया है।" इस प्रकार नाटककार डॉ. सुरेश शुक्ल 'चन्द्र' द्वारा समस्त भारतीय समाज द्वारा महिलाओं पर होनेवाली अत्याचारों की कड़वी सच्चाई सामने रखने का सफल प्रयास किया है।

नाटककार डॉ. सुरेश शुक्ल 'चन्द्र' का मानना है कि समाज में हर तरह के शोषण का विरोध करने के लिए उस पूरे वर्ग को एकजुट हो कर संघर्ष करना होगा, तभी समाज की स्थिति में परिवर्तन होगा। नाटक में शासन तंत्र को भष्टाचार में डूबा हुआ दिखाया गया है, वह महाजन

का साथ दे रहा है। ग्राम पंचायत भी अपना हित साधने में लगी है। उसी का फायदा उठाकर महाजन किसानों की मजबूरी का भरपूर फायदा उठाते है। ऐसी स्थिति में गाँव के कुछ युवक, भ्रष्टाचार के विरोध में खड़े हो जाते हैं और शोषित लोगों को जगाने का प्रयत्न करते है। इस प्रकार इस नये जागरण से भ्रष्ट व्यवस्था के लोग भयभीत एक ऐसे सूत्र में पूरे समाज को बाँधने की परिकल्पना करता है जहाँ कहीं किसी तरह की असमानता, अन्याय, अत्याचार, शोषण, आतंक, अंधविश्वास न हो।

अत: इन तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि 'काला पत्थर' नाटक में किसानों के जीवन की त्रासदी की जितनी बरीकि से, सूक्ष्मता से अभिव्यक्ति प्रदान की है, उतनी ही सूक्ष्मता से नाटककार ने समाज की अन्य समस्याओं को भी उकेरा है। 'काला पत्थर' नाटक में ग्रामीण समाज की समस्याओं को नाटककार ने समाज का ध्यान आकृष्ट कराया नाटककार पाठकों को सजग, जागरूक बनाना ही मुख्य उद्देश्य है।

६.३ सारांश

सारांशत: 'काला पत्थर' नाटक में किसानों-श्रमिकों के जीवन की हर समस्याओं को परत-दर-परत उधारते हुए दिखाया गया है। नाटककार किसानों-श्रमिकों के साथ सदियों से हो रहे अनवरत शोषण की त्रासदी को इस प्रकार हमारे समक्ष रखते हैं कि उनके एक-एक चरित्र की तस्वीर शोषण को पूरा दृश्य हमारे सामने उपस्थित हो जाता है। नाटककार समाज के भेदभाव के अभिशाप को हमेशा-हमेशा के लिए मिटाकर, समानता के धरातल पर एक स्वस्थ समाज के निर्माण की कल्पना करता है। लोगों के हृदय में त्याग, सेवा, करुणा, दया जैसी सद्वृत्तियों का विकास हो। अत: आवश्यक है कि धन-दौलत के बजाय मानवीय सद्गुणों को अपनाया जाए, तभी समाज में परिवर्तन संभव होगा।

६.४ लघूत्तरीय प्रश्न

प्र.१ कल्लू सेठ अपनी चार लड़कियों कि शादी कैसे लड़कों से करता है?

उ. द्विजहा लड़कों से।

प्र.२ पुनिया कि माँ को कौन-सी बीमारी हो गई थी?

उ. लकवा मार दिया था।

प्र.३ पुनिया के माँ के अनुसार प्रभात का विवाह पुनिया से क्यों नहीं हो सकता था?

उ. दूसरी जाति का होने के कारण।

प्र.४ "पंचायतवाले सब भ्रष्ट हैं, थोड़े से पैसे और शराब कि बोतल में बिक जाते है।" यह कथंन किसका है?

उ. संतोषी किसान का।

प्र.५ पलटू कल्लू सेठ के पास क्या रखकर उधार लेता है।

उ. चाँदी कि पायल।

प्र.६ पुलिसवाला कल्लू सेठ के यहाँ किस त्योहार कि त्योहारी लेने आता है?

उ. दीवाली कि।

६.५ दीर्घोत्तरी प्रश्न

प्र.१ 'काला पत्थर' नाटक में निहित समस्याओं पर प्रकाश डालिए।

प्र.२ 'काला पत्थर' नाटक का उद्देश्य लिखिए।

प्र.३ 'काला पत्थर' नाटक कि समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए स्पष्ट कीजिए कि नाटककार को अपने उद्देश्य में पूरी सफलता प्राप्त हुई है ?

६.६ संदर्भ ग्रंथ

१. काला पत्थर - डॉ. सुरेश शुक्ल 'चन्द्र'

२. नयी सदी: नये नाटक - डॉ. अर्जुन जानू घरत

३. माधवी – भीष्म साहनी

४. ध्रुवस्वामिनी - जयशंकर प्रसाद

*****

munotes.in

७

एकांकी: अर्थ, परिभाषा, स्वरूप एवं विकास

इकाई की रूपरेखा

७.० इकाई का उद्देश्य

७.१ प्रस्तावना

७.२ एकांकी का अर्थ, परिभाषा

७.३ एकांकी स्वरूप

७.४ एकांकी विकास

७.५ सारांश

७.६ लघुत्तरीय प्रश्न

७.७ दीर्घोत्तरी प्रश्न

७.८ संदर्भ ग्रंथ

७.० इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में निम्नलिखित बिंदुओं का छात्र अध्ययन करेंगे।

- एकांकी के अर्थ को समझने हेतु।
- एकांकी की परिभाषा को समझने हेतु।
- एकांकी के स्वरूप को स्पष्ट करने हेतु।
- एकांकी के विकास को समझने हेतु।

७.१ प्रस्तावना

हिंदी नाटक पूण रूप से एक नयी विधा है। आधुनिक कहानी की भाँति हिंदी एकांकी नाटक भी पश्चिम से प्रेरित है। कुछ आलोचकों के मत में एकांकी को पश्चिम से जोडना बहुत ठीक नहीं है, क्योंकि रूपक और उपरूपक के कुछ भेद यथा – व्यायोग, भाण, प्रहसन, वीथी, सट्टक, विलासिका, प्रकरणिका आदि एक ही अंक के थे। अत: भारत मैं एकांकी की परंपरा रही है। भास का 'उरूभंग' और 'मध्यम व्यायोग' एकांकी नाटक के निकट है। किन्तु तुलना करने पर आधुनिक एकांकी और संस्कृत के रूपक में स्पष्ट अंतर दिखता है। कथावस्तु और शिल्प-दोनों दृष्टियों से रूपक और एकांकी में अंतर है। आधुनिक एकांकी की मूल प्रेरणा जीवन का द्वंद्व और संघर्ष है। मानसिक विश्लेषण को आधार बनाकर आधुनिक एकांकी नाटक जीवन की अभिव्यक्ति को अपना मुख्य उद्देश्य मानता है। संस्कृत के रूपक में संघर्ष या द्वंद्व का प्राय: अभाव था।

munotes.in

७.२ एकांकी का अर्थ, परिभाषा

हिन्दी एकांकी महत्वपूर्ण और पूर्ण रूप से एक नयी विधा है। आधुनिक कहानी की भाँति हिन्दी एकांकी पर भी पश्चिम का प्रभाव है। भारत में एकांकी की परंपरा रही है। आधुनिक एकांकी की मूल प्रेरणा जीवन का द्वन्द्व और संघर्ष है। मानसिक विश्लेषण को आधार बनाकर आधुनिक एकांकी जीवन की अभिव्यक्ति को अपना मुख्य उद्देश्य मानता है। संस्कृत के रूपक में संघर्ष या द्वन्द्व का प्राय: अभाव था। एकांकी का उद्‌भव एवं विकास पश्चिम में भी नया ही है। पश्चिम में प्राचीन काल में बडे-बडे नाटक ही खेले जाते थे। नाटक के बीच दृश्य–परिवर्तन के लिए समय निकालने के लिए, छोटे-छोटे नाटक खेले जाते थे जिन्हें "कर्टन रेंजर्स" कहते थे। ऐसे नाटकों का स्वतंत्र विकास वहाँ भी नहीं हो पाया। आप सोच रहे होंगे कि एकांकी का विकास क्यों हुआ? इसका उत्तर है – समय की कमी के कारण। विश्व युध्द के बाद आधुनिक ज्ञान – विज्ञान के युग में मनुष्य के पास समय की कमी हो गयी। जीवन की भाग–दौड में वह कम-से-कम समय में अधिक-से-अधिक कार्य करना चाहता है, यहाँ तक कि मनोरंजन के लिए भी वह कम-से-कम समय देना चाहता है। वर्तमान युग में व्यक्ति की व्यस्तता और समय के अभाव के कारण अनेक ऐसी विधाओं का विकास हुआ है जो आकार में लघु हैं। एकांकी का विकास भी इसी कारण हुआ है। प्रसिध्द एकांकीकार डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार "एकांकी में एक घटना होती है और वह नाटकीय कौशल से चरम सीमा तक पहुँचती है|" एकांकी में एक सम्पूर्ण कार्य एक ही स्थान और समय में होना चाहिए। एकांकी में वर्णित कथावस्तु अलग-अलग स्थानों एवं कालों में घटित नहीं होनी चाहिए। अधिकांश एकांकी एक ही अंक और एक ही दृश्य में समाप्त हो जाते हैं, जिससे प्रभाव की एकता एवं घटनाओं की एकसूत्रता बनी रहती है। नाटक के समान एकांकी में भी छ: तत्व होते है। १) कथावस्तु २) चरित्र-चित्रण ३) परिवेश ४)संरंचना शिल्प ५) रंगमंचीयता और ६) प्रतिपाद्य | लेकिन नाटक के समान एकांकी में न तो कथावस्तु के विस्तार का अवकाश रहता है और न ही पात्रों की बहुलता का। ऐसा भी नहीं कि नाटक को छोटा करके एकांकी बना लिया जाए। एकांकी सर्वथा स्वतंत्र विधा है। नाटक में घटनाओं की बहुलता रहती है। नाटक में अनेक अंक होते हैं, किंतु एकांकी में एक ही अंक होता है। एकांकी का कथानक भी इतिहास, राजनीति, पुराण, लोकतंत्र, समाज या चरित्र विशेष से लिया जा सकता है। उसका संबंध जीवन की किसी एक घटना या पहलू से होता है। इसके कथानक के मुख्य पाँच भाग होते है - १) प्रारंभ २) नाटकीय स्थल ३) द्वंद्व ४) चरम सीमा ५) परिणति। उदाहरण के लिए हम डॉ. रामकुमार वर्मा के एकांकी "दीपदान" को लें। इसमें कथानक एक महत्वपूर्ण घटना पर आधारित है – कथानक का विस्तार इसमें नही है। पन्ना धाय द्वारा चित्तौड़ के राजकुमार की जीवन-रक्षा के लिए अपने पुत्र को बलिदान करना ही इसकी कथावस्तु है, पर इसे नाटकीय ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

कथानक का प्रारंभ नाटकीय ढंग से तुलजा भवानी की पूजा के अवसर पर होता है। शामली का आकर पन्ना धाय से यह कहना कि सिपाहियों ने महल को चारों ओर से घेर लिया है, नाटकीय स्थल है।

कथानक में द्वंद्व उस समय आता है, जब पन्ना कुँअर की जगह अपने पुत्र चंदन को सुलाने की बात सोचती है। कथानक में रनवीर द्वारा चंदन पर तलवार से आघात करना चरम सीमा है।

एकांकी में किसी कार्य-विशेष का प्रधानता रहती है। यह कार्य किसी काल -विशेष में घटित होता है, और इसके घटने का कोई स्थान नहीं होता है। इन्हें देश-काल और वातावरण अथवा परिवेश का और भी अधिक महत्त्व होता हैं।

७.३ एकांकी का स्वरूप

एकांकी ने नाटक से भिन्न अपना स्वतंत्र स्वरूप प्रतिष्ठित कर लिया है। एकांकी बड़े नाटक की अपेक्षा छोटा अवश्य होता है परन्तु वह उसका संक्षिप्त रूप नहीं है। बड़े नाटक में जीवन की विविधरूपता, अनेक पात्र, कथा का सांगोपांग विस्तार, चरित्र –चित्रण की विविधता, कुतूहल की अनिश्चित स्थिति, वर्णनात्मकता की अधिकता, चरम सीमा तक विकास तथा घटना विस्तार आदि के कारण कथानक की गति मन्द होती है, जबकि एकांकी में इसके विपरीत, जीवन की एकरूपता कथा में अनावश्यक विस्तार की अपेक्षा, चरित्र-चित्रण की तीव्र और संक्षित्प रूप-रेखा, कुतूहल की स्थिति, प्रारम्भ से ही व्यंजकता की अधिकता और प्रभावशीलता, चरम सीमा तक निश्चित बिन्दु में केंद्रीयकरण तथा घटना–न्यूनता आदि के कारण कथानक की गति क्षिप्र होती है, सदगुरूशरण अवस्थी का कथन है कि जीवन की वास्तविकता के एक स्फुलिंग को पकडकर एकांकीकार उसे ऐंसा प्रभावपूर्ण बना देता है कि मानवता के समूचे भाव जगत को झनझना देने की शक्ति उसमें आ जाती है। हिन्दी एकांकी इतना लोकप्रिय हो उठा है कि बडे नाटकों की रक्षा करने के लिए व्यावसायिक रंग शालाओ ने उसे अपने यहाँ से निकालना शुरू कर दिया, लेकिन उसमें प्रयोग और विकास की संभावनाओं को देखकर पश्चिम के कई देशों में अव्यावसायिक और प्रयोगात्मक रंगमंचीय आन्दोलनों ने उसे अपना लिया। लंदन, पेरिस, शिकागो, न्यूयॉर्क इत्यादि देशों ने इस नए ढंग के एकांकी को तथा उसके रंगमंच को आगे बढाया है, इसके अतिरिक्त एकांकी नाटक को पश्चिम के अनेक महान सन्मानित लेखकों का बल भी मिला है। रंगमंचीय आंदोलनों और इन लेखकों के सम्मिलित एवं अदम्य प्रयोगात्मक साहस और उत्साह के फलस्वरूप आधुनिक एकांकी सर्वथा नई स्वतंत्र और सुस्पष्ट विधा के रूप में प्रतिष्ठित हुई है। उनकी कृतियों के आधार पर एकांकी नाटकों की सामान्य विशेषताओं का अध्ययन भी किया जा सकता है। पश्चिम में एकाकी २० वीं शताब्दी में, विशेषत: प्रथम महायुध्द के बाद, अत्यन्त प्रचलित और लोकप्रिय हुआ। हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में उसका व्यापक प्रचलन इस शताब्दी के चौथे दशक में हुआ। इसका यह अर्थ नहीं कि एकांकी साहित्य की सर्वथा आभिजात्यहीन विधा हैं। पूर्व और पश्चिम दोनों के नाटय साहित्य में उसके निकटवर्ती रूप मिलते है। संस्कृत नाटयशास्त्र में नायक के चरित, इतिवृत्त, रस आदि के आधार पर रूपकों और उपरूपकों के जो भेद किए गए उनमें से अनेक को डॉ. कीथ ने एकांकी नाटक कहा है। इस प्रकार 'दशरूपक' और 'साहित्यदर्पण' में वर्णित व्यायोग, प्रहसन, भाग, वीथी, नाटिका, गोष्ठी, सट्टक, नाटयरासक, प्रकाशिका, उल्लाप्य, काव्य प्रेंखण, श्रीगदित, विलासिका, प्रकरणिका, हल्लीश आदि रूपकों और उपरूपकों को आधुनिक एकांकी के निकट संबंधी कहना अनुचित न होगा। 'साहित्यदर्पण' में 'एकाकं' शब्द का प्रयोग भी हुआ है। एकांकी में जहाँ एक ओर ऐतिहासिक कथानकों का सहारा लिया गया, वही दूसरी ओर सामाजिक समस्याओं के लिए तत्कालीन सामाजिक यथार्थ को विषय बनाया गया। इतिहास आधारित एकांकी नाटकों में प्राचीन इतिहास और साहित्य के उन प्रसंगों को चुना गया जिनसे देश की प्राचीन गरिमा का पता लगे तथा साहस, बलिदान, शौर्य और त्याग जैसे सद्गुणों को

जनमानस में उल्लेखित किया जा सके । रामकुमार वर्मा के 'शिवाजी', 'औरंगजेब की आखिरी रात', 'चारूमित्रा', 'विक्रमादित्य', 'पृथ्वीराज की आँखे', जगदीश चंद्र माथुर का 'कलिंग विजय', डॉ. सत्येंद्र के 'कुणाल', चतुरसेन के 'पन्नाधाय', 'हाडा रानी' तथा हरिकृष्ण प्रेमी कृत 'मान का मंदिर', 'मालव प्रेम' आदि एकांकी नाटको में इतिहास के उन प्रसंगो को कथानक का विषय बनाया गया जो तत्कालीन परिस्थितियों में राष्ट्रीय चेतना को मजबूत बना सकें। चौथे और पाँचवे दशक में समस्यामूलक हिन्दी एकांकी नाटक अधिक लिखे गए। पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित भारतीय समाज में नई समस्याएँ उठ खडी हुई । एक ओर प्राचीन रूढियों और मान्यताओं के प्रति विद्रोह भाव जाग रहा था, तो दूसरी ओर नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व, प्रेम और विवाह की समस्याएँ तथा विकृत कुठाएँ समाज और व्यक्ति को घेरने लगी थी। यद्यपि १९३६ में भुवनेश्वर का 'कारवाँ' एकांकी संग्रह प्रकाशित हो चुका था, जिसमें समाज की कुंठाजन्य विकृतियों और यौन समस्या को उभारा गया था। भुवनेश्वर पर इब्सन और बर्नार्ड शॉ का प्रभाव पडा। भुवनेश्वर सर्वथा नई तकनीक और दृष्टि लेकर हिन्दी एकांकी के क्षेत्र में आए। राष्ट्रीय आन्दोलन और गांधीवादी विचारधारा के प्रभाव से अहिंसा, साम्प्रदायिकता, जाति उत्थान जैसी समस्याओं के समाधान में भी एकांकी नाटकों का सृजन किया गया।

इस युग के एकांकीकारों ने समाज की सूक्ष्म कमजोरियों को देखा, समझा, पहचाना और उसका समाधान प्रस्तुत किया। उदयशंकर भट्ट ने 'सेठ लाभचंद' 'दस हजार', 'उन्नीस सौ पैंतीस' आदि एकांकियों में मध्यवर्गीय बाह्य आडम्बरों पर चोट की है । 'नेता' एकांकी में उन्होने स्वार्थी राजनीतिक व्यक्तियों पर गहरा व्यंग्य किया है । उपेंद्रनाथ अश्क ने अपने 'जोक', 'तौलिए', 'सूखी डाली' जैसे एकांकियों में मध्यवर्गीय परिवारों के पात्रों की मनोवैज्ञानिक और आर्थिक - सामाजिक स्थितियों को हास्य व्यंग्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

७.४ एकांकी का विकास

आधुनिक हिन्दी साहित्य की जिन गद्यात्मक विधाओं का विकास विगत एक शताब्दी में हुआ है, उनमें एकांकी का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है । किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से, हिन्दी साहित्य में इसका उद्भव उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम चतुर्थांश में माना जाता है| यदि इसके संवादात्मक स्वरूप एवं एक नाटय विधा के अस्तित्व के परिप्रेक्ष्य में विचार किया जाय तो इसके सूत्र हमें अत्यंत प्राचीन समय से मिलने लगते है।

आधुनिक एकांकी वैज्ञानिक युग की देन है । विज्ञान के फलस्वरूप मानव के समय और शक्ति की बचत हुई है। फिर भी जीवन संघर्ष में मानव दौड-धूप अव्याहत जारी है। जीवन की त्रस्तता और व्यस्तता के कारण आधुनिक मानव के पास इतना समय नहीं है कि वह बड़े-बड़े नाटकों, उपन्यासों, महाकाव्यों आदि का संपूर्णतः रसास्वादन कर सके और इसलिए गीत, कहानी, एकांकी आदि साहित्य के लघुरूपों को अपनाया जा रहा है। किन्तु एकांकी की लोकप्रियता का एकमात्र कारण समयाभाव ही नहीं है । भोलानाथ तिवारी के शब्दों में "यह नहीं कहा जा सकता कि चूंकि हमारे पास बड़ी-बड़ी साहित्यिक रचनाओं को पढ़ने के लिए समय नहीं है, इसलिए हम गीत, कहानी, एकांकी आदि पढ़ते है। बात यह है कि हम जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं और समस्याओं आदि को क्रमबध्द एवं समग्र रूप से

भी अभिव्यक्त देखना चाहते हैं और उन अभिव्यिक्तियों का स्वागत करते हैं, मगर साथ ही साथ किसी एक महत्त्वपूर्ण भावना, किसी एक उद्यीप्त क्षण, किसी एक असाधारण एवं प्रभावशाली घटना या घटनांश की अभिव्यक्ति का भी स्वागत करते हैं। हम कभी अनगिनत फूलों से सुसज्जित सलोनी वाटिका पसन्द करते है और कभी भीनी सुगन्धि देने वाली खिलने को तैयार नन्हीं सी कली। दोनों बाते हैं, दो रूचियाँ है, दो पृथक किन्तु समान रूप से महत्त्वपूर्ण दृष्टिकोण हैं, समय के अभाव या अधिकता की इसमें कोई बात नहीं।

एकांकी ने नाटक से भिन्न अपना स्वतंत्र रूप प्रतिष्ठित कर लिया है। एकांकी बडे नाटक की अपेक्षा छोटा अवश्य होता है, परन्तु वह उसका संक्षिप्त रूप नहीं है। बडे नाटक में जीवन की विविधरूपता, अनेक पात्र, कथा का साँगोपांग विस्तार, चरित्र चित्रण की विविधता, कुतूहल की अनिश्चित स्थिति, वर्णनात्मकता की अधिकता चरम सीमा तक विकास तथा घटना-विस्तार आदि के कारण कथानक की गति मन्द होती है, जबकि एकांकी में इसके विपरीत, जीवन की एकरूपता, कथा में अनावश्यक विस्तार की अपेक्षा, चरित्र-चित्रण की तीव्र और संक्षिप्त रूप-रेखा, कुतूहल की स्थिति, प्रारम्भ से ही व्यंजकता की अधिकता और प्रभावशीला, चरम सीमा तक निश्चित बिन्दु में केन्द्रीयकरण तथा घटना-न्यूनता आदि के कारण कथानक की गति क्षिप्र होती है सद्गुरू शरण अवस्थी का कथन है कि 'जीवन की वास्तविकता के एक स्फुलिंग को पकडंकर एकांकीकार उसे ऐसा प्रभावपूर्ण बना देता है कि मानवता के समूचे भाव जगत को झनझना देने की शक्ति उसमें आ जाती है।'

ऐतिहासिक दृष्टि से हिन्दी-एकांकी के विकास-क्रम को निम्नलिखित प्रमुख काल – खण्डों मे विभाजित किया जा सकता है:

१) भारतेंदु – द्विवेदी युग (१८७५-१९२८)

२) प्रसाद - युग (१९२९-१९३७)

३) प्रसादोत्तर-युग (१९३८-१९४७)

४) स्वातंत्र्योत्तर युग (१९४८ से अब तक)

वास्तव में प्रारम्भिक एकांकी-प्रयोगों में भी भटकती हुई नाटय-दृष्टि ही प्रमुखता से उभरकर सामने आई है, किन्तु विकास की दृष्टि से उन्हें नकारा नहीं जा सकता।

१) भारतेन्दु - द्विवेदी युग:

जिस प्रकार भारतेन्दु हिन्दी में अनेकांकी नाटकों को लिखने वालों में प्रथम नाटकाकार माने जाते हैं, उसी प्रकार हिन्दी में सबसे पहला एकांकी भी उन्होंने ही लिखा। यद्यपि इस सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद अवश्य है। फिर भी भारतेन्दु-प्रणीत 'प्रेमयोगिनी' (१८७५ई.) से हिन्दी एकांकी का प्रारम्भ माना जा सकता है। आलोच्ययुग में विषयगत दृष्टिकोण को सामने रखकर सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक्, धार्मिक एवं सांस्कृतिक प्रवृत्तियॉ उभरी। समाज में प्रचलित प्राचीन परम्पराओं, कुप्रथाओं एवं स्वस्थ सामाजिक विकास में बाधक रीति-रिवाजों को दूर करने का प्रयास उन सामाजिक समस्या-प्रधान रचनाओं के माध्यम से किया गया। इन एकांकीकारों ने जहाँ सामाजिक कुरीतियों पर हास्य एवं व्यंग्यपूर्ण प्रहार

किये, वहीं सामाजिक नवनिर्माण के लिए भी समाज को प्रेरित एवं जाग्रत किया। इन रचनाओं के पात्र भारतीय जन–जीवन के जीवित एवं सजीव पात्र है, जिनके संवादों द्वारा भारतीय भद्र जीवन में प्रविष्ट पाखण्ड एवं व्यभिचार का भण्डाफोड होता है। इस दृष्टि से भारतेन्दु रचित 'भारत-दुर्दशा', प्रतापनारायण मिश्र रचित 'कलिकौतुक रूपक', श्री-शरण-रचित 'बाल-विवाह', किशोरीलाल गोस्वामी-रचित 'चौपट चपेट', राधाचरण गोस्वामी-रचित 'भारत में पवन लोक', 'बूढ़े मुँह मुहासे' आदि महत्त्वपूर्ण रचनाएँ हैं| जिनमें धार्मिक पाखण्ड, सामाजिक रूढियों एवं कुरीतियों पर तीखे व्यंग्य किये गये हैं। देवकीनन्दन रचित 'कलियुगी जनेऊ', 'कलियुगी विवाह', राधाकृष्णदास रचित 'दुखिनीबाला', काशीनाथ खत्री रचित 'बाल विधवा' आदि रचनाएं भारतीय नारी के त्रस्त विवाहित जीवन का यथार्थ चित्रण हैं। सामाजिक भ्रष्टाचार का चित्रण कार्तिक प्रसाद खत्री-रचित 'रेल का विकट खेल' में मिलता है, जिसमें रेल्वे विभाग में रिश्वत लेने वालों का भण्डाफोड किया गया है। समाज सुधार की परम्परा के पोषक इन एकांकीकारो के प्रयास के फलस्वरूप भारतीय समाज का यथार्थ चित्रण समाज के समक्ष उपस्थित हुआ तथा इन्हीं के द्वारा जन सामान्य को नवीन एवं प्रगतिशील विचारों को ग्रहण करने की प्रेरणा भी मिली। इन्हीं के प्रयासों का परिणाम था कि उपर्युक्त रचनाओं में से कुछ का उल्लेख नाटक के अन्तर्गत भी किया जाता है। वास्तव में ये एक अंक के नाटक ही है। एकांकी की परम्परा में आते हुए भी इन्हें सभी दृष्टियों से पूर्ण 'एकांकी' नहीं कहा जा सकता। इनमें एकांकी के कुछ तत्व अवश्य ढूँढे जा सकते हैं।

कुल मिलाकर विचार किया जाए तो ज्ञात होगा कि उस काल के एकांकी साहित्य को प्रेरित करने वाली कई नाटय शैलियाँ थीं| (क) संस्कृत की नाट्य परम्परा (ख) अंग्रेजी, बांगला, पारसी रंगमंच और (ग) लोकनाटक। आलोच्य युग के सभी एकांकीकारों ने इन्हें आत्मसात् किया। इस प्रकार इस युग में परम्परा के प्रभाव की प्रधानता रही। नए-नए प्रयोग होते रहे। इसलिए कला की सूक्ष्म दृष्टि इस काल के एकांकीकारों में भले न हों, पर आधुनिक एकांकियों के पूर्वगामी अवश्य हैं।

२) प्रसाद युग:

हिंदी एकांकी के विकास की दृष्टि से द्वितीय युग प्रसाद के युग से माना जाता है। इस संदर्भ में आधुनिक एकांकी साहित्य की प्रथम मौलिक कृति के रूप में प्रसाद के 'एक घूँट' का उल्लेख किया जा सकता है। यह रचना सन १९२९ में प्रकाशित हुई। यहीं से हम एकांकी के शिल्प में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन देखते है। ससोद्रेक के लिए संगीत-व्यवस्था, संस्कृत नाट्य प्रणाली का विदूषक, स्वगत कथन आदि प्राचीन परम्पराओं के निर्वाह् के साथ ही स्थल की एकता, पात्रों का मनौवेज्ञानिक चरित्र-चित्रण, गतिशील कथानक आदि आधुनिक एकांकी सभी विशेषताएं 'एक घूंट' में मिलती है। अत: भारतेन्दु ने यदि आधुनिक एकांकी की नीवं डाली है तो उसे पल्लवित और पुष्पित करने का श्रेय प्रसाद जी को ही है।

वास्तव में आधुनिक ढंग से हिन्दी एकांकियों का विकास प्रसाद-युग में ही हुआ, क्योंकि इस युग में कुछ महत्त्वपूर्ण नवीन प्रयोग एकांकी क्षेत्र में हुए। इस युग में एकांकीकारों ने पाश्चात्य अनुकरण पर नवीन शैली में एकांकी लिखना प्रारम्भ किया तथा पाश्चात्य टेकनीक को अपनाया। स्पष्टत: इस युग में एकाकी नाटकों में पाश्चात्य नाटय सिध्दान्तों की प्रेरणा एवं प्रभाव विद्यमान है, पाश्चात्य नाटककारों में हैनरिक, इब्सन ,गाल्सवर्दी तथा बर्नार्ड शॉ आदि

का प्रभाव इस युग के एकांकियों पर प्रत्यक्ष रूप से पडा, तथा इससे एकांकी साहित्य को परिपक्वता की स्थिति पर पंहुचने में सहायता मिली। भारतेन्दु युग में जो एकांकी संस्कृत परिपाटी पर विरंचित हुआ था, इस युग में आकर वह नवीन रूपों में विकसित होने लगा। प्राचीनता का मोह छोडकर नवीन ढंग के एकांकी नाटक लिखे गये जो कथानक की दृष्टि से मानव जीवन के अत्यधिक निकट थे। प्राचीन कथावस्तु में जो कृत्रिमता होती थी उसके स्थान पर सामाजिक, पारिवारिक एवं दैनिक समस्याओं को एकांकी का विषय बनाना प्रारम्भ किया गया। ये रचनाएं सामाजिक यथार्थ के निकट आयीं। प्राचीन कृत्रिम प्रणाली, काव्यमय कथोपकथन, प्राचीन रंगमंच एवं अस्वाभाविकता के बहिष्कार का स्वर इस युग की रचनाओं में प्रमुखतया प्राप्त होता है। नई समस्याएँ, विचारधारा एवं गद्यात्मक शिष्ट भाषा का प्रयोग प्रारम्भ हुआ।

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रसाद-युग में भी विभिन्न एकांकीकारों ने विविध क्षेत्रीय समस्याओं एवं परिस्थितियों के उदघाटन हेतु हास्य, व्यंग्य को महत्व दिया तथा उसका सफलतापूर्वक प्रयोग भी किया। प्रसाद-युग के उपर्युक्त प्रतिभाशाली एकांकीकारों के अतिरिक्त अन्य अनेक एकांकीकार भी हुए, जिन्होंने एकांकी के क्षेत्र में अपनी रचनात्मक प्रतिभा का परिचय दिया है। अनेक एकांकीकारों ने अन्य भाषाओं में लिखित एकांकियों का हिन्दी अनुवाद भी प्रस्तुत किया। यद्यपि इस युग में आधुनिक युग की अपेक्षा विकास नगण्य कहा जाता है, किन्तु इसमें संदेह नहीं कि प्रसाद-युग में आकर नाटयकला विषयक मान्यताओं में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि इस युग ने आगामी एकांकीकारों को एक पुष्ट आधारभूमि प्रदान की जिसमें आधुनिक एकांकी साहित्य और भी स्वतंत्र रूप से विकसित हुआ।

३) प्रसादोत्तर-युग:

प्रसादोत्तर युग हिन्दी एकांकी के विकास की तीसरी अवस्था है| जिसका समय सन १९३८ से १९४७ ई. (स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व) तक रहा। इसके भी हम दो उप-सोपान मान सकते हैं।

१) १९३८ ई. से १९४० ई. तक और

२) १९४१ ई. से १९४७ ई. तक।

प्रथम सोपान अर्थात् इस काल के प्रारम्भिक समय में हिन्दी एकांकी में अपने समय की विभिन्न समस्याओं एवं परिस्थितियों पर तर्क-वितर्क मिलता है। तभी कुछ विचित्र एवं क्रांतिकारी परिस्थितियों ने विषय, शैली, और दृष्टिकाण को भी नया मोड दिया। हिन्दी के अनेक एकांकीकार इस समय पाश्चात्य नाटय शैलियों एवं विकसित प्रवृत्तियों से प्रभावित होकर उनका अनुकरण कर रहे थे। इब्सन, विल्यिम आर्चर, बर्नार्ड शॉ आदि ख्याति प्राप्त पाश्चात्य लेखकों का प्रभाव हिन्दी एकांकीकारों ने परम्परागत एकांकी-तत्वों का निर्वाह करने के साथ-साथ अभिनव शिल्प-रूपों को भी स्थान दिया तथा विषय की दृष्टि से एकांकी को मात्र मनोरंजन की वस्तु न बनाकर उसमें मानव जीवन की सामायिक समस्याओं एवं विरूपताओं का चित्रण प्रारम्भ कर दिया। अर्थात् इस समय हिन्दी एकांकी आदर्शवाद के एकांगी घेरे से निकल कर यथार्थवाद की और बढ़ा। सन १९४० से १९४७ तक का समय

भारत के लिए आपत्तियों का समय था। युध्द की विभीषिकाएं, बंगाल का अकाल, आजादी की हुंकार, विदेशी शासकों के लोमहर्षक अत्याचार, चोरबाजारी आदि इन्हीं सात वर्षो के भीतर की ही बाते हैं। इन सबने हमारे चिन्तन और हमारी कला को प्रभावित किया। एकांकी भी इनसे अछूता नहीं रह सका| कृत्रिमता की बजाय स्वाभाविक और सहज जीवन को प्रतिबिम्बित करने वाले एकांकी की रचना प्रारम्भ हुई। इन एकांकियों में नाटकीय अभिनय के स्थान पर सरल अभिनयात्मक संकेत दिए जाने लगे। इसमें परम्परागत रंगमंच-विधान सम्पूर्ण रूप से परिवर्तित हो गया और उससे सहजता, सरलता, स्वाभाविकता एवं यथार्थ के दर्शन होने लगे। शिल्प-विधान के अनावश्यक आडम्बर बन्धन से इस युग का एकांकी साहित्य मुक्त हो गया। संकलन त्रय को वस्तुत: इसी समय एकांकी का अनिवार्य अंग माना जाने लगा। अब एकांकी केवल साहित्यिक विधा ही न रह गयी, अपितु इस युग में रंगमंच की स्थापना के साथ उसके स्वरूप में भी अन्तर परिलक्षित हुआ। इस प्रकार, प्रसादोत्तर युग में पहुंचकर, हर दृष्टि से एकांकी साहित्य का एक स्वतंत्र अस्तित्व परिलक्षित होता है। अनेक पाश्चात्य नाटककारों जैसे इब्सन, शाँ, गाल्सवर्दी, चेखव आदि एकांकीकारों की रचनाओं का हिन्दी अनुवाद प्रारम्भ हो गया था। इन अंग्रेजी एकांकियों के हिन्दी अनुवांदो की माँग रेडियो के क्षेत्र में अधिक थी। प्रो. अमरनाथ गुप्त ने ए. ए. मिलन के एकांकी का हिन्दी अनुवाद किया। कामेश्वर भार्गव द्वारा 'पुजारी' शीर्षक हिन्दी अनुवाद प्राप्त हुआ जो 'विशप्स कैन्डिलस्टिक्स' का हिन्दी अनुवाद है| इसके अतिरिक्त हैराल्ड ब्रिगहाऊस की रचनाओं के भी हिन्दी अनुवाद हुए। इस प्रकार आलोच्य युगीन एकांकीकारों ने विभिन्न नवीन प्रयोगों के द्वारा एकांकी साहित्य को समृिध्दशाली बनाया गया।

७.५ सारांश

हिन्दी एकांकी का प्रारंभ जयशंकर प्रसाद के 'एक घूँट' एकांकी से माना जाता है। इसमें एकांकी की तकनीक का पूरा निर्वाह किया गया है। हिन्दी में पाश्चात्य एकांकी के शिल्प से प्रभावित एकांकी नाटकों की रचना १९३० के दशक से होने लगी। हिन्दी एकांकी परम्परा को विकसित करने का श्रेय डॉ. रामकुमार वर्मा को दिया जाता है। उनका पहला एकांकी 'बादल की मृत्यु' १९३० में प्रकाशित हुआ, इसके बाद वे निरंतर एकांकी रचना करते रहे। हिन्दी एकांकी का उदय उस समय हुआ जब देश में स्वतंत्रा आन्दोलन पूरी तरह जोरों पर था। एकांकी की विषय वस्तु भी अन्य साहित्यिक विधाओं की भाँति अपने समय की आवश्यकताओं से प्रेरित थी। इस दौर के एकांकी नाटकों में भी देश प्रेम, राष्ट्रीय भावना और समाज सुधार आदि को विषय बनाया गया था। एकांकी में जैसे-जैसे कथानक और शिल्प में बारीकी आती गई| वैसे-वैसे आदर्श के स्थान पर यथार्थवादी प्रवृत्तियाँ उभर कर सामने आती गई।

७.६ लघुत्तरीय प्रश्न

१. हिन्दी एकांकी का आरंभ किस रचना से माना जाता है?

उ - एक घूँट।

२. हिन्दी एकांकी परंपरा को विकसित करने का श्रेय किसे दिया जाता?

उ - डॉ.रामकुमार वर्मा।

३. बादल की मृत्यु के एकांकीकार कौन है?

उ - रामकुमार वर्मा।

४. प्रसादोत्तर युग की शुरुआत कब से मानी जाती है?

उ - १९३८ से १९४७ ई तक।

५. जोंक, तौलिए और सूखी डाली एकांकी के रचनाकार कौन हैं?

उ - उपेन्द्रनाथ अश्क।

७.७ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१. एकांकी की परिभाषा बताते हुए उसके अर्थ को स्पष्ट कीजिए।

२. एकांकी के स्वरूप विस्तार को समझाइए।

३. एकांकी के विकास को स्पष्ट कीजिए।

४. प्रमुख एकांकीकारों का उल्लेख करते हुए उनकी एकांकियों पर प्रकाश डालिए।

७.८ संदर्भ ग्रंथ

१. हिंदी एकांकी - सिद्धनाथ कुमार

२. समकालीन एकांकी : संवेदना एवं शिल्प - डॉ. रंजना वर्दे

३. मानक एकांकी - सं. डॉ. बच्चन सिंह

४. एकांकी मंच - डॉ. वी. पी. 'अमिताभ'

*****

८

नाटक और एकांकी में साम्य वैषम्य

इकाई की रुपरेखा

८.० इकाई का उद्देश्य

८.१ प्रस्तावना

८.२ नाटक और एकांकी

८.३ नाटक और एकांकी में साम्य

८.४ नाटक और एकांकी में वैषम्य

८.५ सारांश

८.६ लघुत्तरीय प्रश्न

८.७ दीर्घोत्तरी प्रश्न

८.८ संदर्भ ग्रंथ

८.० इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में निम्नलिखित बिंदुओं का छात्र अध्ययन करेंगे।

- एकांकी का अर्थ समझने हेतु।
- जीवनी लेखन में ध्यान रखने वाली बातों को समझने हेतु।
- नाटक और एकांकी में साम्य को समझने हेतु।
- नाटक और एकांकी में वैषम्य को समझने हेतु।

८.१ प्रस्तावना

हिंदी एकांकियों की परंपरा को जिस तरह अतीत के रूपकों-उपरूपकों से जोड़ने का प्रयास किया गया है, उसी प्रकार अंग्रेजी-साहित्य के इतिहास-लेखक भी अंग्रेजी एकांकियों को अतीत में दूर तक घसीट ले जाते है। किन्तु वहाँ भी आधुनिक एकांकी का जन्म बीसवीं शती के पहले दशक में हुआ। कुछ इतिहास लेखक १९०३ में लंदन के 'वेस्ट एंड थिएटर' में खेले गए पट-उत्थानक (करटेन-रेज़र) 'बन्दर का पंजा' से एकांकी का जन्म मानते है। पहले इंग्लैंड में यह प्रथा थी कि दर्शक प्रेक्षागृह में नाटक शुरू होने के पहले पहुंच जाते थे। दर्शकों के आने के समय तथा नाटक आरंभ होने के बीच के वक्त में छोटे-मोटे नाटकों का आयोजन किया जाता था। पर 'बन्दर का पंजा' जो पट-उत्थानक के रूप में खेला गया था, उसका प्रभाव दर्शकों पर इतना अधिक पड़ा कि लोग मूल नाटक देखे बिना ही वापस चले गए।

munotes.in

इसके फलस्वरूप पट-उत्थानक की व्यवस्था हटा दी गई। किन्तु कालांतर में यही करटेन-रेज़र एकांकी के रूप में बदल गया।

रंगमंच पर अभिनय की जा सकने योग्य रचना नाटक कहलाती है। नाटक की पूर्ण सफलता पात्रों की सजीवता पर निर्भर करती है। नाटक के विभिन्न तत्वों में कथावस्तु, पात्र , संवाद, देशकाल एवं वातावरण, भाषा-शैली आदि को शामिल किया जाता है। भारतीय नाटकों में नायक कथा को कला की ओर ले जाता है| दर्शक उसी के विकास उत्थान में रूचि रखते है। जबकि पाश्चात्य नाटकों में नायक परिस्थितियों के चक्र में घूमता रहता है।

८.२ नाटक और एकांकी

८.२.१. हिंदी नाटक का विकास :

हिंदी में नाटक लेखन की परंपरा का विकास भी अन्य गद्य विधाओं की तरह भारतेन्दु युग से ही प्रारंभ होता है। उससे पहले भी प्राचीन काल से ही संस्कृत के अनुरूप नाटकों का सृजन होता आया है, पर पद्य रूप में ही ये लिखे गए है तथा इनमें नाटक के तत्वों का भाव है। भारतेन्दु ने आधुनिक काल में संस्कृत, बांग्ला तथा अंग्रेजी से कई नाटकों का अनुवाद भी किया। हिंदी के प्रथम नाटक के संबंध में भी विद्वानों के बीच भी मतभेद है। रीवाँ नरेश महाराज द्वारा रचित 'आनंद रघुनंदन' को ही हिंदी का सर्व प्रथम नाटक माना जाता है।

हिंदी नाटकों के विकास क्रम का अध्ययन करने के लिए उसे निम्नलिखित कालखंडों में विभक्त किया जा सकता है।

१) भारतेन्दु युग (सन १८५७ ई. से १९०० ई. तक)

२) प्रसाद युग (सन १९०० ई. से १९५० ई. तक)

३) प्रसादोत्तर युग (सन १९५० ई. के उपरांत)

१. भारतेन्दु युग:

भारतेन्दु युग में मौलिक और अनूदित दोनों प्रकार के नाटकों का प्रचार हुआ। स्वयं भारतेन्दु ने दोनों प्रकार के नाटकों की रचना में अगुवाई की। विद्यासुन्दर, रत्नावली, धनंजय विजय, कर्पूर मंजरी, पाखण्ड विडंबन, मुद्राराक्षस, दुर्लभ बन्धु उनके द्वारा अनूदित रचनाए है, और भारत जननी, वैदकी हिंसा हिंसा न भवति, सत्य हरिश्चद्र, श्री चन्द्रावली नाटिका, विषस्य विषमौषधम, भारत दुर्दशा, नीलदेवी, अंधेर नगरी, सती प्रताप, प्रेम जोगिनी आदि उनके द्वारा रचित मौलिक नाटक है।

भारतेन्दु के नाटकों में सुधारवादी दृष्टिकोण के साथ-साथ राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति हुई है तथा युगीन समस्याओं को जनता तक पहुंचाने की चेष्टा भी की गई है। अतीत के गौरव एवं ऐतिहासिक श्रेष्ठत्व का प्रतिपादन करने का बीजवपन भारतेन्दु युग में ही हुआ था, जिसका विकास प्रसाद युगीन नाटकों में दिखाई देता है।

भारतेन्दु काल के अन्य नाटककारों में प्रमुख है लाला श्रीनिवासदास, राधाकृष्ण दास, बालकृष्ण भट्ट, राधाचरण गोस्वामी, गोपालराम गहमरी, किशोरीलाल गोस्वामी, प्रतापनारायण मिश्र आदि| लाला श्रीनिवासदास द्वारा रचित रणधीर प्रेममोहिनी तथा संयोगिता स्वयंवर उच्च कोटि की रचनाए है।

भारतेन्दु युग के नाटकों में ऐतिहासिक, पौराणिक, काल्पनिक कथाओ को विषय-वस्तु बनाया गया। समाज सुधार, राष्ट्रीय गौरव, अतीत गौरव के नाटकों के माध्यम से दर्शको तक संप्रेषित किया गया, प्रहसनों का मूल उद्देश्य व्यंग्य के द्वारा समाज की कुरीतियों का समापन करना था। भारतेन्दु नाट्यकला के तत्वों का भी समावेश मिलता है। भारतेन्दु ही इस पुग के सर्वश्रेष्ठ नाटककार है।

२. प्रसाद युग:

प्रसाद जी ने हिंदी ऐतिहासिक नाटकों की रचना की है। उन्होंने भारत के अतीत गौरव का चित्रण करने के साथ-साथ राष्ट्रीयता की भावना को भी उत्पन्न करने का प्रयास अपने नाटकों के माध्यम से किया है।

सबसे पहले हिंदी नाटकों में पात्रों के अंतर्द्वंद्व का कलात्मक चित्रण प्रसाद ने ही किया था। उनके नाटकों में दार्शनिकता की छाया फैली हुई है। उनके नाटक न तो सुखान्त है न दुखांत, वे प्रसादांत माने जाते है। उनके नाटकों में ऐतिहासिक नाटकों की संख्या अधिक है। ऐतिहासिक होते हुए भी वे समस्यामूलक है। 'राज्श्री', 'विशाख', 'स्कन्दगुप्त', 'अजातशत्रु', 'चन्द्रगुप्त', 'ध्रुवस्वामिनी' उनके प्रमुख ऐतिहासिक नाटक है। 'जनमेजय का नागयज्ञ' उनका पौराणिक नाटक है। प्रसाद के नाटकों में इतिहास और कल्पना का सुन्दर समन्वय मिलता है। 'अजातशत्रु' पर बौद्ध दर्शन का स्पष्ट प्रभाव है, 'ध्रुवस्वामिनी' में प्रसाद जी ने 'नारी मुक्ति' के विषय को अपनाया है।

नाट्य शिल्प की दृष्टि से प्रसाद जी के नाटक अद्वितीय है। उनमें भारतीय एवं पाश्चत्य नाट्यकला का सुन्दर समन्वय हुआ है। पर उनके नाटक पाठ्य अधिक है, अभिनेय कम।

प्रसाद युग के अन्य नाटककरों में हरिकृष्ण प्रेमी, लक्ष्मीनारायण मिश्र, सेठ गोविन्ददास, गोविन्द वल्लभ पत्न, उपेन्द्रनाथ अश्क, दृन्दावनलाल वर्मा, किशोरीदास वाजपेयी, वियोगी हरि, चतुरसेन शास्त्री, पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' आदि के नाम लिए जा सकते है। लक्ष्मीनारायण मिश्र समस्यामूलक नाटकों के लिए प्रसिद्ध हैं| उनके नाटकों में ‘संन्यासी’, ‘राक्षस का मंदिर’, ‘मुक्ति का रहस्य’, ‘सिंदूर की होली’ तथा ‘आधी रात’ महत्वपूर्ण है। 'सिंदूर की होली' में मिश्र जी ने विधवा विवाह एवं नारी उद्धार जैसी समस्याओं को प्रस्तुत किया है।

उपेन्द्रनाथ 'अश्क' ने ‘स्वर्ग की झलक’, ‘छठां बेटा’, ‘अलग-अलग रास्ते’, ‘अंजो दीदी’ ‘अंधी गली’, ‘कैद और उड़ान’, ‘जय पराजय’ आदि अनेक नाटकों की रचना की। साथ ही पूर्व युगों के समान संस्कृत, बंगला, अंग्रेजी से नाटकों का हिंदी में अनुवाद भी इस युग में हुआ।

munotes.in

३. प्रसादोत्तर युग:

प्रसादोत्तर नाटकों का प्रारम्भ हम सन १९५० ई. से मान सकते है। इस काल के बाद लिखे गए नाटक जीवन यथार्थ से अधिक जुड़े हुए है, तथा उनमें रंगमंचीयता एवं अभिनेयता का विशेष ध्यान रखा गया है। इस युग के नाटकों में विषय-वस्तु एवं शिल्प की दृष्टि से बदलाव नजर आने लगा। प्रासोदोत्तर नाटककारों में विष्णु प्रभाकर, जगदीशचंद्र माथुर, धर्मवीर भारती, लक्ष्मीनाराण लाल, रामकुमार वर्मा, मोहन राकेश, नरेश मेहता, विनोद रस्तोगी, सुरेन्द्र वर्मा, डॉ. शंकर शेष, रमेश बख्शी, मुद्रा राक्षस, नरेंद्र कोहली, गिरिराजकिशोर, गोविन्द चातक, जयनाथ नलिन आदि के नाम प्रसिद्ध हैं|

विष्णु प्रभाकर ने अपने नाटकों में आधुनिक भावबोध से उत्पन्न तनाव एवं जीवन-संघर्ष को सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया है। इनके लिखे प्रसिद्ध नाटकों में 'डॉक्टर', 'युगे युगे क्रांति' और 'टूटते परिवेश' के नाम लिए जा सकते है। 'युगे-युगे क्रांति' में पीढ़ींगत संघर्ष की अभिव्यक्ति है तथा 'टूटते परिवेश' में पारिवारिक विघटन को यथार्थ अभिव्यक्ति मिली है। 'डॉक्टर' एक मनोवैज्ञानिक नाटक है, जिसमे भावना और कर्त्तव्य के अन्तर्द्वन्द्व को चित्रित किया गया है। जगदीशचंद्र माथुर ने हिंदी रंगमंच को नई दिशा देने का प्रयास अपने बहुचर्चित नाटकों के माध्यम से किया। 'कोणार्क', 'शारदीया', 'पहला राजा' तथा 'दशरथनंदन' उनके प्रमुख नाटक है।

४. साठोत्तरी नाटक:

साठोत्तरी नाटक जीवन में अकेलेपन, रिक्तता बोध, मानवीय संबंधों की जड़ता को अभिव्यक्ति देने वाले विषयो से संबंधित है। ये नाटक आधुनिकता बोध की भूमिका पर लिखे गए है। इन नाटकों के शिल्प में भी नवीनता, सांकेतिकता एवं बिंबधर्मिता दिखाई पड़ती है।

इन नाटकों में अँधा कुआ (लक्ष्मीनारायण लाल), गांधार की भिक्षुणी (विष्णु प्रभाकर), हत्यारे (नरेंद्र कोहली), एक प्रश्न मृत्यु (डॉ. विनय), पागल घर (नंदकिशोर आचार्य), बांसुरी बजती रही (गोविन्द चातक) आदि महत्वपूर्ण रचनाएँ है।

१९९० के बाद लिखे गए 'कोर्ट मार्शल', 'सबसे उदास कविता', 'जलता हुआ रथ' स्वदेश दीपक के उल्लेखनीय नाटक है। नंदकिशोर आचार्य के 'गुलाम बादशाह' एवं 'हस्तिनापुर' भी इसी काल के है। 'नहीं कोई अन्त नहीं' (प्रताप सहगल), जादू का कालीन (मृदुला गर्ग) मुआवजे (भीष्म साहनी), भारत भाग्य विधाता (रमेश उपाध्याय) आदि नाटक भी उल्लेखनीय है।

कुल मिलाकर हिंदी नाटकों की यह विकास यात्रा अनवरत जारी है। नए नाटककार प्रयोगधर्मी हैं। नाटक अब मानव जीवन की विंसगतियों को उजागर करने वाली सशक्त विधा बन चुकी है।

८.२.२ एकांकी:

हिंदी में एकांकी रचना का आरंभ भारतेन्दु युग से हुआ था। भारतेन्दु ने संस्कृत नाट्य साहित्य से प्रेरणा ग्रहण करते हुए नाटक और एकांकी के विभिन्न रूपों के विकास की

कोशिश की। उनके 'अँधेर नगरी' (प्रहसन), 'विषस्य विषमौषधम', 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति', 'प्रेमयोगिनी' आदि रचनाएँ प्राचीन ढंग के एकांकियों के लक्षणों से युक्त है। उनके अलावा राधाचरण गोस्वामी, बालकृष्ण भट्ट, राधाकृष्ण दास, कार्तिक प्रसाद आदि लेखकों ने भी एकांकी-सदृश रचनाएँ लिखी। द्विवेदी युग में हिंदी एकांकी पर पाश्चात्य एकांकी का प्रभाव स्पष्ट रूप से पड़ने लगा। उनके बाह्य रूप में थोड़ा अंतर दिखाई पड़ा। उन एकांकियों का लक्ष्य समाज सुधार था।

लगभग १९३० ई. के बाद हिंदी में एकांकी का वास्तविक विकास हुआ। लगभग उसी समय जयशंकर प्रसाद ने 'एक घूँट' की रचना की। जो आधुनिक ढंग का पहला एकांकी माना जाता है। प्रसाद के 'सज्जन' और 'करुणालय' को भी एकांकी के अंतर्गत ही रखा गया है। प्रसाद के बाद अनेक रचनाकारों ने इस विधा का विकास किया। १९३८ में 'हंस' पत्रिका का एकांकी विशेषांक प्रकाशित हुआ, जिससे एकांकी कला से संबंधित अनेक नई बातें सामने आई। इसके बाद डॉ. रामकुमार वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, लक्ष्मीनारायण मिश्र, उदयशंकर भट्ट, भुवनेश्वर प्रसाद, सेठ गोविन्द दास, जगदीशचंद्र माथुर आदि ने कई एकांकियों द्वारा सामाजिक समस्याओं का सफल चित्रण किया। लक्ष्मीनारायण मिश्र ने अपने अनेक एकांकी संग्रहों के माध्यम से पौरणिक, ऐतिहासिक, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक समस्याओं की चर्चा की। सेठ गोविन्ददास ने आदर्शवादी दृष्टिकोण के साथ सामाजिक, ऐतिहासिक आदि विभिन्न प्रकार के एकांकी लिखे। जगदीशचंद्र माथुर ने यथार्थवादी शैली में विभिन्न समस्याओं को प्रस्तुत करके उनका समाधान भी किया है। उनके एकांकी रंगमंचीय दृष्टि से सफल भी हैं।

लक्ष्मीनारायण लाल, धर्मवीर भारती, मोहन राकेश, भारतभूषण अग्रवाल, विनोद रस्तोगी, प्रभाकर माचवे, सुरेंद्र वर्मा आदि ने कई एकांकियों और रेडियो एकांकियों की रचना करके आधुनिक एकांकी के क्षेत्र में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। द्वितीय महायुद्ध के बाद एकांकियों और ध्वनि रूपकों को प्रमुखता प्राप्त हुई। पिछले कुछ वर्षों से हिंदी में विभिन्न विषयो पर आधारित असंख्य एकांकी लिखे गए। इनमें सामाजिक एवं नैतिक विषयों पर सबसे अधिक सशक्त और प्रौढ़ एकांकी लिखे गए। डॉ. जयनाथ नलिन, डॉ. अर्जुन चौबे, गोविंदलाल माथुर, प्रो. इन्दु शेखर आदि एकांकीकारों ने आधुनिक युग एवं समाज का विश्लेषण अत्यंत सूक्ष्म एवं व्यंग्यात्मक शैली में प्रस्तुत किया है। विष्णु प्रभाकर, हरिकृष्ण प्रेमी, शिवकुमार ओझा आदि एकांकीकारों ने राष्ट्रीयता को प्रमुखता दिया। डॉ. धर्मवीर भारती ने आधुनिक जीवन के असंगितयों का उदघाटन एकांकियों के माध्यम से किया। उनमें यथार्थवादी दृष्टिकोण देखे जा सकते है।

एकाकी लेखन में प्रवृत्त साहित्यकारों ने हिंदी में कई ध्वनि-रूपकों और रेडियों एकांकियों की रचना की है। इनके अलावा गीत-नाट्य की तरह काव्यत्व शैली में एकांकी लिखने में भी कई लेखक सफल हुए है। उनमें आरसी प्रसाद सिंह, भगवती चरण वर्मा आदि उल्लेखनीय है।

आज का हिंदी एकांकीकार देशी और विदेशी-विविध नाटय साहित्यों के संपर्क में आ रहा है। एक ओर उस पर जहाँ अंग्रेजी, अमेरिकी ओर रुसी नाटकों का प्रभाव पड़ रहा है, वहाँ दूसरी ओर भारतीय लोक नाटकों का भी। अंतः वह आज इस क्षेत्र में नवीन प्रयोग कर रहा है।

डॉ. रामकुमार वर्मा:

आधुनिक हिंदी एकांकी के जनक के रूप में डॉ. रामकुमार वर्मा जाने जाते है। इनके एकांकी कला की दृष्टि से सुन्दर बन पड़े है। उन्होंने ऐतिहासिक और सामाजिक एकांकी लिखे है और वे अधिकांश दुखांत है। इनके पृथ्वीराज की ऑखे, रेशमी टाई, चारुमित्रा, सप्त किरण यह चार ऐतिहासिक एकांकी महत्वपूर्ण है।

भुवनेश्वर प्रसाद:

सन १९६० के बाद प्रयोगवादी नाटकों का पर्यवसान आधुनिकतावादी ऊलजलूल एब्सर्ड नाटकों में होता है, जिनका मूल स्वर असहायता, चरम निराशा, अराजकता और शून्यवाद में होता है| ऊलजलूल या व्यर्थताबोधक एकांकियों के प्रथम पुरस्कर्ता के रूप में भुवनेश्ववर प्रसाद जाने जाते है। उनका 'कारवाँ' एकांकी संग्रह १९३६ में प्रकाशित हुआ था। इसमें 'श्यामा : एक वैवाहिक विडंबना', 'शैतान', 'रोमांस-रोमांच', और 'कारवाँ' एकांकी संगृहीत है। शा लाटेंस और फ्रायड से प्रभावित ये एकांकी ना होकर भी प्रेम के त्रिकोण फ्रेम में बंधकर पुराने ही है। १९३८ में 'ऊसर' के प्रकाशन के साथ व्यर्थता-बोध नाटक की शुरुआत होती है। 'तांबे के कीड़े' ऊलजलूल या विसंगत नाटकों का ऐसा नमूना है, जिसकी परंपरा हिंदी में ५५ वर्ष बाद चली। भुवनेश्ववर ने द्वितीय विश्वयुद्धोत्तर वैश्विक दृष्टि को इन एकांकियो में अपनाया। इसमें कोई कथा नहीं है, चरित्र नहीं है, कथानक नहीं है, संवादों का सामंजस्य नहीं है। वस्तुतः यहाँ बेतरतीब आवाजों का एक कोलाज है, एक अमूर्त चित्र है, जिससे आधुनिक जीवन का अर्थहीन संत्रास अभिव्यक्त होता है। एकांकियों में प्रयुक्त शब्दों के बीच का मौन कितना अर्थपूर्ण और नाटकीय होता है, इसका एहसास भुवनेश्वर को बहुत पहले हो चुका था।

८.३ नाटक और एकांकी में साम्य

नाटक काव्य का हिस्सा है, जो दृश्य काव्य में आता है। इसे यदि आसान भाषा में समझा जाए तो जो लोग थिएंटर, टी. व्ही, रेडियो पर किसी कहानी को विस्तृत रूप में प्रस्तुत करते हैं उसे हम नाटक कहते है। नाटक में कई पात्र होते है, जिनमे सभी के अपने-अपने नाम होते है और उन्हें अपने-अपने किरदार के अनुसार अभिनय करना होता है।

किसी एक अंक वाले नाटक को एकांकी कहा जाता है, अंग्रेजी में इसे हम 'वन ऐक्ट प्ले' शब्द से जानते है, और हिंदी में इन्हे 'एकांकी नाटक' और एकांकी के नाम से जाना जाता है। एकांकी का अर्थ होता है कि जब किसी नाटक में एक व्यक्ति का ही पूरा वर्णन हो, वह भी उसकी युवावस्था के बाद तो हम उसे एकांकी कहते है। एकांकी अधिक विस्तार में नहीं होती और इसकी गति तीव्र होती है। यह भी नाटक की तरह थिएटर, टी. व्ही, रेडियो आदि पर अभिनय के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। नाटक में अनेक अंक होते है, जबकि एकांकी में सिर्फ एक ही अंक होता है।

नाटक में आधिकारिक के साथ उसके सहायक और गौण कथाएँ भी होती है, जबकि एकांकी में एक ही कथा का वर्णन होता है। नाटक में किसी भी पात्र या चरित्र का क्रमशः विकास

दिखाया जाता है। जबकि एकांकी में किसी भी चरित्र को पूर्णतः विकसित रूप में दिखाया जाता है।

नाटक की विकास प्रक्रिया धीमी होती है, जबकि एकांकी की विकास प्रक्रिया बहुत तीव्र होती है।

नाटक के कथानक में फैलाव और विस्तार होता है, जबकि एकांकी में घनत्व होता है, अर्थात नाटक में हम पात्र और कहानी को बढ़ा सकते है, जबकि एकांकी में ऐसा नहीं किया जा सकता है।

८.४ नाटक और एकांकी में वैषम्य

नाटक	एकांकी
१. नाटक में अनेक अंक होते है।	एकांकी में एक अंक होता है।
२. नाटक में आधिकारिक कथा के साथ-साथ सहायक गौण कथाएँ भी होती है।	एकांकी में एक ही कथा और घटना होती है।
३. नाटक के चरित्र का क्रमशः विकास दर्शाया जाता है।	एकांकी में पात्रों की क्रिया कलापों और चरित्रों का संयोजन इस रुप में होता है कि एकांकी होते हुए भी उसके व्यक्तित्व का समूचा बिम्ब मिल जाए।
४. नाटक के कथानक में फैलाव और विस्तार होता है।	एकांकी के कथानक में ही घनत्व रहता है।
५. नाटक की पृष्ठभूमि और कथानक विस्तृत होता है।	एकांकी में पृष्ठभूमि अथवा कथानक के विस्तार का अवसर नहीं रहता।
६. नाटक में जीवन की विविध पहलूओं का चित्रण किया जाता है।	एकांकी में जीवन के किसी एक पक्ष को लिया जाता है।
७. नाटक में पात्रों की संख्या अधिक हो सकती है।	एकांकी में कम-से-कम पात्र रखे जाते है।
८. नाटक में मुख्य घटना के साथ अवान्तर प्रसंग भी हो सकते है।	एकांकी में कम-से-कम प्रसंग रखे जाते है।
९. नाटक में किसी विचार को विस्तार से प्रस्तुत किया जा सकता है।	एकांकी में विचार को संकेतों द्वारा रखा जाता है।
१०. नाटक में स्थान और काल की सीमा का विस्तार हो सकता है।	एकांकी में स्थान, समय और घटना के विस्तार के लिए अवसर नहीं रहता, संक्षिप्त एकांकी के लिए आवश्यक है।

munotes.in

८.५ सारांश

हिंदी में नाटक लेखन की परंपरा का विकास भी अन्य गद्य विधाओं की तरह भारतेन्दु युग से ही प्रारम्भ होता है। इससे पहले भी प्राचीन काल से ही संरकृत के अनुरूप नाटकों का सृजन होता है, पर पद्य में ही ये लिखे गए है, तथा इनमें नाटक के तत्वों का आभाव है। भारतेन्दु ने आधुनिक काल में संस्कृत, बंगला तथा अंग्रेजी से कई नाटकों का अनुवाद भी किया। हिंदी के प्रथम नाटक के संबंध में भी विद्वानों के बीच मतभेद है। नाटक की ही जाति का एकांकी भी है, लेकिन दोनों में काफी भिन्नता है। नाटक का अभिनय जहाँ एक घंटे से ढाई घंटे के भीतर हो जाता है, तो एकांकी का अभिनय दस मिनट से एक घंटे तक का समय पर्याप्त है| उपन्यास और कहानी में जो अन्तर है, वही नाटक और एकांकी में है। नाटक जीवन का सर्वांगीण चित्र प्रस्तुत करता है, तो एकांकी किसी जीवन-मर्म की अभिव्यक्ति। एकांकी में एक केंद्रीय भावना और एकोन्मुखता होती है। नाटक में कई प्रकार के क्रिया-व्यापारों और प्रवृत्तियों का सामूहिक चित्रण है, तो एकांकी में एक ही केन्द्रीय भाव का चित्रण है। नाटक में कई अंक और दृश्य होते है। लेकिन एकांकी में एक अंक है, और एक या एक से अधिक दृश्य होते है। सामान्यतः एकांकी में भी वे ही छः तत्व हैं जो नाटक में हैं| नाटकों की अपेक्षा एकांकी का लघुकाय ढाँचा अधिक प्रासंगिक है। हिंदी के इतिहासकारो ने प्रायः एकांकी का उद्भव भारतेन्दु युग से ही माना है। भारतेन्दु के युग में देश विपन्नावस्था में था। अंग्रेजो ने जनता का शोषण करना आरम्भ किया था। निम्न वर्ग सरकार की कठोर नीति के कारण कष्ट पा रहा था। मध्यवर्ग के हाथ में नेतृत्व था, पर वह तो सरकारी नौकरी मिलने से सरकार का और विरोध करने के पक्ष में नहीं था। धार्मिक क्षेत्र में भी अराजकता फैली हुई थी। इन सभी प्रवृत्तियों की और निर्देश कर उनसे मुक्ति पाने का उपदेश उस समय के साहित्य में हमें प्राप्त होता है।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हिंदी नाटक की शिराओ में नवीन शक्ति का संचार हुआ, जबकि देश में अंग्रेजी साम्राज्य की जडें बहुत गहरी उतर चुकी थी। अंग्रेजी शिक्षा, वटवृक्ष की भाँति फैलती जा रही थी। पाश्चात्य संस्कृति और परम्पराओं ने भारतीय साहित्य को नया मोड़ दिया। १९३० के बाद के एकांकियों में एकांकी के सभी तत्वों का निर्वाह प्रायः होने लगा। हिंदी में आधुनिक एकांकी का प्रचलन बीसवीं शताब्दी में हुआ और उस पर अंग्रेजी प्रभाव, संस्कृत प्रभाव की अपेक्षा अधिक है। आधुनिक एकांकी उस युवक के समान है, जो अपने आदर्शो में भारतीय संस्कृति का उपासक है, किन्तु आचरण में पाश्चात्य सभ्यता का अनुगामी बन गया है| अंत यह स्पष्ट है कि आधुनिक एकांकी में प्राण और आत्मा भारतीय अवश्य है, किन्तु उसकी बाह्य वेशभूषा पाश्चात्य है|

एकांकी बड़े नाटक का छोटा या संक्षिप्त स्वरुप नहीं है, वह एक अलग विधा है। बड़े नाटक में मानव जीवन की क्रमबद्ध विवेचना हो सकती है, क्योंकि विस्तार के लिए उसमे गुंजाइश रहती है। अनेक अंक, स्थल तथा अलग-अलग प्रकार की परिस्थितियों से गुजरते हुए पात्रों का चरित्र-चित्रण उसमें होता है।

८.६ लघुत्तरीय प्रश्न

१. 'हंस' पत्रिका का एकांकी विशेषांक कब प्रकाशित हुआ था?

उ - 1938 ई. ।

२. 'एक घूँट' एकांकी के रचनाकार कौन है?

उ - जयशंकर प्रसाद।

३. 'ऊसर' किसका एकांकी संग्रह है?

उ - भुवनेश्वर प्रसाद।

४. 'पृथ्वीराज की आँखे' किसकी एकांकी है?

उ - डॉ. रामकुमार वर्मा।

५. 'कारवाँ' एकांकी का प्रकाशन वर्ष क्या है?

उ - 1936 ई. ।

८.७ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१. नाटक की परिभाषा देते हुए प्रमुख नाटककारों का परिचय दीजिए।

२. नाटक के अर्थ स्वरुप को स्पष्ट कीजिए।

३. नाटक के उद्धभव और विकास को विस्तारपूर्वक समझाइए।

४. एकांकी के उद्धव और विकास को स्पष्ट कीजिए।

५. नाटक और एकांकी में साम्य स्थापित कीजिए।

६. नाटक और एकांकी में वैषम्य बतलाइए।

७. प्रमुख एकांकीकारों का परिचय दीजिए।

८.८ संदर्भ ग्रंथ

१. हिंदी एकांकी - सिद्धनाथ कुमार

२. समकालीन एकांकी : संवेदना एवं शिल्प - डॉ. रंजना वर्दे

३. मानक एकांकी - सं. डॉ. बच्चन सिंह

४. एकांकी मंच - डॉ. वी. पी. 'अमिताभ'

*****

९

दीपदान

इकाई की रुपरेखा

९.० इकाई का उद्देश्य

९.१ प्रस्तावना

९.२ 'दीपदान' एकांकी की कथावस्तु

९.३ 'दीपदान' एकांकी के प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण

९.४ सारांश

९.५ लघुत्तरीय प्रश्न

९.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

९.७ संदर्भ ग्रंथ

९.० इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य राजकुमार वर्मा द्वारा लिखित 'दीपदान' एकांकी के विविध पक्षों व उसके उद्देश्य को विद्यार्थियों के सामने रखना है। इस इकाई के पठन के द्वारा विद्यार्थी प्रस्तुत एकांकी में ऐतिहासिक संदर्भ व मानवीय मूल्यों की महानता को आत्मसात कर उन्हें अपने चरित्र में उतार सकेंगे।

९.१ प्रस्तावना

'दीपदान' एकांकी राजकुमार वर्मा द्वारा लिखित हिंदी की एकांकी परंपरा में महत्वपूर्ण एकांकी है। इस एकांकी में चित्रौड़ के स्वर्गीय महाराजा साँग के सबसे छोटे पुत्र व राज्य के उत्तराधिकारी कुँवर उदयसिंह की हत्या के प्रयास को पन्ना धाय द्वारा विफल करने के प्रयास का बहुत सुंदर वर्णन किया गया है। यद्यपि इस प्रयास को विफल करने में पन्ना धाय को अपने पुत्र चन्दन का उत्सर्ग करना पड़ा। पन्ना धाय के इस महान त्याग ने मानवीय त्याग व बलिदान परंपरा को एक नयी ऊँचाई दी और पन्ना धाय को भारतीय इतिहास में अमर बना दिया।

९.२ 'दीपदान' एकांकी की कथावस्तु

'दीपदान' एकांकी, ऐतिहासिक एकांकी है। इस एकांकी में चित्रौड़ के महाराणा सांगा के उत्तराधिकारी कुँवर उदयसिंह के जीवन पर आए संकट का वर्णन किया गया है। कुँवर उदयसिंह महाराणा सांगा के सबसे छोटे पुत्र हैं और राज्य के होनेवाले भावी महाराणा हैं। उनकी अभी बाल्यावस्था ही है। १४ वर्ष की अवस्था में वे धाय माता पन्ना के द्वारा पालित-पोषित हैं। पन्ना कलेजे के टुकड़े की तरह उदयसिंह को पालती-पोसती है और उसे चित्रौड़ राजवंश का दीपक तथा महाराणा साँगा का कुलदीपक कहती है। कुँवर उदयसिंह

को वर्तमान महाराणा विक्रमादित्य भी पर्याप्त प्रेम देते हैं और पन्ना धाय को यह पूरा विश्वास था कि उम्र के बढ़ने पर जब महाराणा भजन भव्य की ओर मुड़ेंगे तब कुँवर उदयसिंह को ही वे महाराणा की गद्दी सोपेंगे। पन्ना धाय का अपना भी चन्दन नाम का पुत्र है और कुँवर उदयसिंह का हमउम्र है। हमउम्र होने के कारण वह उदयसिंह का अच्छा मित्र है और साथ साथ रहता है। पन्ना उदयसिंह व चन्दन को समान भाव से पालती है।

चित्रौड़ के शांत वातावरण की शांति अधिक दिन नहीं बनी रहती। महाराणा सांगा के भाई पृथ्वी सिंह का दासी पुत्र बनवीर महाराणा बनने के सपने संजोए बैठा है और अपने इस सपनें को साकार करने के लिए वह किसी भी हद तक जाने की इच्छा रखता है। ३२ वर्ष का बनवीर अपने इस सपने को जल्दी से सच करने के लिए एक षड़यंत्र रचता हैं। बनवीर महल की लड़कियों को इकट्ठा कर उन्हें अपने द्वारा बनवाये गये मयूर पक्ष कुंड में दीपदान करने के लिए और उत्सव मनाने के लिए कहता है। इस उत्सव की आड़ में वह अपने षड़यंत्र को अमली जाम पहनाना चाहता था। रात्रि के समय जब महल में उत्सव, शोर शराबे व दीपदान का माहौल था ठीक उसी समय वह महाराणा विक्रमादित्य के महल में घुस जाता है और सोते हुए महाराणा विक्रमादित्य की हत्या कर देता है। पहले से ही बिके हुए सैनिक व सामंत बनवीर का कोई विरोध नहीं करते। महाराणा विक्रमादित्य की इस नृशंस हत्या के बाद वह कुँवर उदयसिंह को भी मारने के लिए उनके महल की ओर बढ़ने लगता है किंतु इसी बीच सोना जो रावल सरूप सिंह की लड़की है और उदयसिंह की सहेली है इस बात की खबर पन्ना धाय तक पहुँचा देती है। महाराणा विक्रमादित्य की हत्या की खबर सुनकर पन्ना धाय सन्न रह जाती है पर उसे यह पता चलता है कि बनवीर महाराणा विक्रमादित्य की हत्या करने के बाद उसी के महल की ओर बढ़ रहा है तो वह सतर्क हो जाती है। वह समझ जाती है कि बनवीर एक खतरनाक इरादा लेकर उसके महल की ओर बढ़ रहा है और वह कुँवर उदयसिंह की हत्या करना चाहता है। उसके महल के चारो ओर बनवीर के सैनिकों का जमावड़ा भी इसी ओर संकेत कर रहा था। वह उदयसिंह की रक्षा को लेकर चिंतित हो जाती है और हर स्थिति उसे बचाने के लिए दृढ़ संकल्प होती है।

पन्ना धाय जब कुँवर उदयसिंह को बचाने के उपाय के बारे में सोच रही थी ठीक उसी समय कीरत बारी महल में जूठी पत्तलों को उठानेवाले बड़े टोकरे के साथ प्रवेश करता है। पन्ना धाय तुरंत उदयसिंह को बचाने की योजना बनाती है। वह कुँवर को जूठन उठाने के टोकरे में सावधानीपूर्वक सुलाकर ऊपर से गीली पतलों को डालकर उन्हें महल से बाहर ले जाने का आदेश कीरत बारी को देती है। साथ ही साथ उससे यह भी कहती है कि वह बेरिस नदी के किनारे उसे मिले ताकि वहाँ से कुँवर को सुरक्षित स्थान पर पहुँचाया जा सके।

महल से कुँवर उदयसिंह को सुरक्षित निकालने के बाद वह अपने बेटे चन्दन को कुँवर के स्थान पर सुला देती है और उसे चादर से ढंक देती है ताकि बनवीर सोये हुए चन्दन को पहचान न सके। होता भी ऐसा ही है, बनवीर रात्रि के अंधकार में मदिरा के नशे में धुत पन्ना धाय के महल में प्रवेश करता है और पन्ना धाय को जागीर या मुँहमांगा ईनाम देने की घोषणा करता है और बदले में कुँवर उदयसिंह की मांग करता है। बनवीर के प्रलोभन को पन्ना धाय ठुकरा देती है। और हिंसा के नशे में ग्रस्त बने बनवीर से कुँवर उदयसिंह के जीवन की भीख मांगती है पर सत्ता को पाने के नशे में चूर बनवीर उसे तलवार का भय दिखाते हुए रास्ते से हटने के लिए कहता है और उदयसिंह को मारने के इरादे से शैय्या की

munotes.in

ओर तेजी से बढ़ता है। बनवीर के खतरनाक यादे व भयानक रूप से बिना डरे पन्ना उस पर अपनी कटार चला देती है पर बनवीर उस वार को अपनी ढाल पर झेल लेता है और पन्ना की कटार छीन लेता है तथा शैय्या के करीब जाकर सोये हुए बालक पर कुँवर उदयसिंह के धोखे में तलवार से जोरदार प्रहार करता है। अपने पुत्र चन्दन की हत्या का दुख पन्ना धाय सह नहीं पाती और चीखकर जमीन पर गिरकर बेहोश हो जाती है।

इस प्रकार पन्ना धाय महान त्याग करती है। अपने पुत्र का बलिदान कर वह कुँवर उदयसिंह की रक्षा करने में सफल होती है और चित्रौड़ के प्रति अपनी ईमानदारी, समर्पण तथा कर्मनिष्ठा का एक महान उदाहरण प्रस्तुत करते हुए मानवीय मूल्यों की उच्चतम गरिमा को अपने पवित्र आचरण से स्थापित करती है।

९.३ 'दीपदान' एकांकी के प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण

पन्ना धाय:

पन्ना धाय दीपदान एकांकी की केन्द्रीय पात्र है। एकांकी की संपूर्ण कथा पन्ना धाय के इर्द-गिर्द घूमती है। पन्ना धाय पर कुँवर उदयसिंह के लालन-पालन की जिम्मेदारी है और पन्ना धाय इसे पूरी ईमानदारी तथा कर्तव्यनिष्ठा के साथ निभाती है। अपने पुत्र चन्दन और कुँवर उदयसिंह दोंनो का लालन-पालन वह एक जैसे भाव से करती है। कुँवर उदयसिंह के जीवन के महत्व व उसके ऊपर मंडराते खतरे को वह भली भाँति समझती है, इसलिए वह हमेशा सतर्क व चौकन्नी रहती है।

बनवीर को लेकर वह हमेशा संशय व भय की स्थिती में रहती है क्योंकि बनवीर की मानसिकता को वह जानती थी और इस बात को अच्छी तरह से पहचानती थी कि बनवीर की दृष्टि मेवाड़ की राजगद्दी पर लगी हुई है और वह कुँवर उदयसिंह के लिए भविष्य में खतरनाक सिद्ध हो सकता है।

पन्ना धाय को जब सोना से यह पता चलता है कि बनवीर महाराणा विक्रमादित्य की हत्या करके उसी के महल की ओर आ रहा है तो वह चौकन्नी हो जाती है कुँवर उदयसिंह की सुरक्षा को लेकर चिंतित हो उठती है और कीरत बारी के माध्यम से वह कुँवर उदयसिंह को जूठन की टोकरी में रखवाकर सुरक्षित स्थान पर पहुँचा देती है। कुँवर उदयसिंह महल में नहीं हैं इस बात की भनक बनवीर को न लगे इसलिए वह एक और साहसपूर्ण व कठोर निर्णय लेती है और अपने पुत्र चन्दन को कुँवर उदयसिंह के पलंग पर सुला देती है। बनवीर कुँवर उदयसिंह के धोखे में चन्दन की हत्या कर देता है। इस प्रकार महान त्याग व बलिदान कर पन्ना धाय चित्तौड़ के उत्तराधिकारी को बचा लेती है।

बनवीर:

बनवीर चित्रौड़ के महाराणा सांगा के भाई पृथ्वीसिंह का दासी पुत्र है। ३२ वर्ष का बनवीर अति महत्वाकांक्षी व सत्ता का लालची युवक है। उसकी दृष्टि चित्तौड़ के तख्त पर लगी रहती है। वह जानता है कि महाराणा विक्रमादित्य व कुँवर उदयसिंह के रहते वह कभी भी चित्तौड़ के सिंहासन पर काबिज नहीं हो सकता इसलिए वह निरंतर इस कोशिश में रहता है

munotes.in

कि कैसे इन दोनों को रास्ते से हटाया जा सके। इसकी योजना भी वह दीपदान उत्सव के माध्यम से बना लेता है। दीपदान की भीड़ व शोर का सहारा लेकर वह महाराणा विक्रमादित्य के महल में घुस जाता हैं। पहले से ही खरीदें हुए सामंत व सैनिक उसका कोई विरोध नहीं करते और वह बड़ी आसानी से विक्रमादित्य की हत्या कर देता है। महाराणा विक्रमादित्य की हत्या करने के बाद वह अपने रास्ते के दूसरें काँटें को भी हटाना चाहता है और कुँवर उदयसिंह की हत्या करने के इरादे से वह पन्ना धाय के महल की ओर मुंड़ जाता है। इसीबीच पन्ना धाय को सोना के माध्यम से इस बात की भनक लग जाती है कि बनवीर कुँवर उदयसिंह की हत्या करने उसके महल की ओर पन्ना धाय समय रहते कीरत नारी की मदत से कुँवर उदयसिंह को सुरक्षित स्थान पर पहुँचा देती है। और अपने पुत्र चन्दन को कुँवर की शैय्या सुला देती है। शराब के नशे में धुत बनवीर चन्दन पर अपनी तलवार का जोरदार वार करके उसकी हत्या कर देता है। बनवीर सत्ता के नशे में सारी मर्यादाएँ व नैतिकताएं तोड़ता हुआ पशु प्रवृत्ति से भी नीचे गिर जाता है और दूसरी पन्ना धाय अपने महान त्याग व बलिदान के कारण मनुष्यता की सर्वोच्च कोटी में पहुँच जाती है।

९.४ सारांश

प्रस्तुत इकाई में पन्ना धाय 'दीपदान' एकांकी की प्रमुख पात्र रही है। वह अपने बेटे का त्याग कुँवर उदयसिंह की रक्षा के लिए करती है और चित्तौड़ के उत्तराधिकारी को बचा लेती है। इसीकारण पन्ना धाय अपनी ईमानदारी, समर्पण और मानवीय मूल्यों की उच्चत्तम गरिमा को स्थापित करती हैं।

९.५ लघुत्तरीय प्रश्न

१. पन्ना धाय पुत्र का बलिदान देकर किसकी रक्षा करती है?

उ - कुँवर उदयसिंह।

२. पन्ना धाय किसके ऊपर कटार चला देती है?

उ - बनवीर पर।

३. कुँवर उदयसिंह की हत्या की साजिश के पहले बनवीर किसकी हत्या करता है?

उ - महाराणा विक्रमादित्य की।

९.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१. ‘दीपदान’ एकांकी के कथ्य पर विचार करते हुए उसके संदेश को समझाइए।

२. ‘दीपदान’ एकांकी के आधार पर पन्ना धाय के चरित्र का चित्रण कीजिए।

३. ‘दीपदान’ एकांकी के मुख्य पात्रों का चरित्र-चित्रण कीजिए।

४. 'दीपदान' एकांकी के कथ्य के आधार पर उसके शीर्षक की उपयुक्तता पर विचार कीजिए।

९.७ संदर्भ ग्रंथ

१. एकांकी - सुमन (एकांकी संग्रह) - सं. हिंदी अध्ययन मंडल, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई

*****

munotes.in

१०

और वह जा न सकी

इकाई की रूपरेखा

१०.० इकाई का उद्देश्य

१०.१ प्रस्तावना

१०.२ 'और वह जा न सकी' एकांकी की कथावस्तु

१०.३ 'और वह जा न सकी' एकांकी के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

१०.४ सारांश

१०.५ लघुत्तरीय प्रश्न

१०.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१०.७ संदर्भ ग्रंथ

१०.० इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य विष्णु प्रभाकर द्वारा लिखित एकांकी 'और वह जा न सकी' के विविध पक्षों का विद्यार्थियों के सामने उद्घाटन करना है । इस इकाई के पठन के द्वारा विद्यार्थी प्रस्तुत एकांकी के विविध पात्रों, स्थितियों, स्त्री-पुरूष संबंधों व दाम्पत्य जीवन में संघर्ष व सामंजस्य के विविध रूपों से परिचित हो सकेंगे।

१०.१ प्रस्तावना

'और वह जा न सकी' विष्णु प्रभाकर की एक महत्वपूर्ण एकांकी है। इस एकांकी में विष्णु प्रभाकर दाम्पत्य जीवन के संघर्षों, सामंजस्य और पति-पत्नी के बीच के संबंधों में आनेवाले उतार-चढ़ाव का बहुत सुंदर और मनोवैज्ञानिक चित्रण करते हैं । शैलेन्द्र और शारदा किस तरह अपनी टूटती हुई गृहस्थी संभालते हैं और कैसे पति-पत्नी के बीच विश्वास और आत्मीयता का नाजुक सूत्र सभी प्रकार के झटकों को सहकर भी मजबूत बना रहता है। इन तमाम बिन्दुओं का चित्रण इस सुंदर एकांकी में किया गया है। शैलेन्द्र पेशे से लेखक है और अच्छी खासी प्रसिद्धी पा चुका है पर गृहस्थी को चलाने के मामले में लापरवाह व बहुत ज्यादा लाचार है। कमाई का भी कोई स्थायी जरिया नहीं है। इस सब के कारण उसकी पत्नी शारदा बेहद परेशान रहती है और गृहस्थी को और आगे खींच पाने में अपने-आपको समर्थ नहीं पाती। वह जीवन के इस बिन्दु पर पहुँचकर शैलेन्द्र से अलग होना चाहती है पर जब उसे इस बात का पता चलता है कि शैलेन्द्र का प्रेम उसके लिए गहरा-सच्चा व एकनिष्ठ है तो वह अपनी गलती को स्वीकार कर और भी ईमानदारी व समर्पण भाव से शैलेन्द्र से जुड़ जाती है। इस प्रकार वह शैलेन्द्र को छोड़कर नहीं जा पाती।

१०.२ 'और वह जा न सकी' एकांकी की कथावस्तु

'और वह जा न सकी' विष्णु प्रभाकर की एक महत्वपूर्ण एकांकी है। इस एकांकी में विष्णु प्रभाकर ने शैलेन्द्र व शारदा के माध्यम से दाम्पत्य जीवन के विभिन्न पक्षों का सुंदर व मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। शैलेन्द्र व शारदा पति-पत्नी हैं। शैलेन्द्र पेशे से लेखक है और लेखक के रूप में समाज में अपनी प्रतिष्ठा बना चुका है। लेखक के रूप में जहाँ व प्रतिष्ठित हो चुका है वही एक कमाऊ पति के रूप में उसकी स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। वह अपने लेखकीय व्यक्तित्व के अनुरूप अच्छे पैसे नहीं कमा पाता। ठीक-ठाक कमाई न होने के कारण उसकी गृहस्थी अच्छी नहीं चल पाती। शारदा को गृहस्थी चलाने में बड़ी मशक्कत करनी पड़ती है।

शैलेन्द्र अपनी सीमाओं को नहीं समझता। वह निरंतर अपने सामाजिक दायरे को विकसित करता रहता है। रोज चार-छह लोग उसके घर पहुँचते हैं और वह बार-बार शारदा से चाय-नाश्ते तथा भोजन की मांग करता है। बेचारी शारदा दौड़-भागकर उसकी हर फरमाइश पूरी करने की कोशिश करती है। कई बार वह पड़ोसियों के यहाँ से भी खाने-पीने की चीजें उधार लाकर, खुद भुखे रहकर भी शैलेन्द्र की फरमाइशों को पुरा करती है पर शैलेन्द्र इस गंभीरता तथा खींचतान को समझते हुए भी नहीं समझता। वह परिवार व उसकी जिम्मेदारियों के प्रति लापरवाह बना रहता है। शारदा अंततः इन स्थितियों से गुजरते हुए अपना धैर्य खोने लगती है। शारदा को लगने लगता है कि वह इन स्थितियों में गृहस्थी नहीं चला सकती और शैलेन्द्र की लापरवाही व नकारेपन को और ज्यादा बर्दाश्त नहीं कर सकती। वह सोचती है कि शैलेन्द्र को अपना जीवनसाथी चुनते हुए उसने कितने हसीन सपने देखे थे लेकिन आज वे सारे सपने बिखर चुके हैं। शैलेन्द्र अपनी दुनिया में इतना डूब चुका है कि उसे पत्नी व बच्चे तक का कोई ख्याल नहीं है। उँगली में निकली फुंसी के कारण उँगली को काटने की नौबत आ गई है पर शैलेन्द्र को शारदा की कोई परवाह नहीं है।

शारदा का क्रोध तब और बढ़ जाता है जब शशि ताने मारते हुए आटा देने से मना कर देती है। शशि कहती है कि - हर तीसरे दिन आटा माँगने आ जाते हैं ? कहाँ से दें ? आटा माँगने गया बेटा खाली हाथ वापस चला आता है और शशि चाची के क्रूर व्यवहार को शारदा से बताता है। इस पर पहले तो शारदा उत्तेजित होती है पर बाद में वह इस बात का अनुभव करती है कि शशि या कोई उसे कितने दिन उधार देगा और पति जिसे घर की जिम्मेदारी देखनी चाहिए थी वह सारी जिम्मेदारियों से निरत लापरवाह बैठा है। शारदा को वे दिन याद आते है जब उसकी सहेलियों ने उसे केवल स्वप्नदर्शी रचनाकार से विवाह करने से मना किया था पर उसने अंततः वही किया जिसे न माने की सलाह उसे दी गई थी।

अपनी वर्तमान स्थिति से अत्यंत असंतुष्ट शारदा जब शैलेन्द्र का घर छोड़कर जाने का मन बना रही थी तभी एक और घटना घटती है। शीला जो एक नवयुवती है और शैलेन्द्र की प्रशंसक वह अचानक शैलेन्द्र के घर पहुंच जाती है। शीला पहले भी शैलेन्द्र के पास आती रही थी, वह शैलेन्द्र से कहानी लिखने की कला सीखना चाहती थी पर आज वह अलग तरह की समस्या लेकर शैलेन्द्र के पास आई थी। आज वह अपनी पारिवारिक समस्या को लेकर शैलेन्द्र के पास आई थी। वह अपने पति के आचरण से असंतुष्ट थी और उसे छोड़कर शैलेन्द्र के पास आना चाहती थी। वह शैलेन्द्र के सामने बार-बार अपनी समस्या को रखती

थी और उनसे उसका निराकरण जानना चाहती थी। वह शैलेन्द्र से कहती है कि वह कल ही अपने पति को छोड़कर उनके पास आ जाएगी। इस पर शैलेन्द्र बड़े साफ शब्दों में उसे कह देता है कि घर उसका नहीं हैं, घर तो शारदा का है और इस बारे में उसे शारदा से ही इजाजत लेनी होगी। यहाँ तक कि वह जो भी है वह शारदा के कारण ही है। शैलेन्द्र जब वह कुछ शीला से कह रहा था तो पीछे छिपी शारदा यह सब सुन रही थी। उसे अपने कानों पर विश्वास नहीं होता। वह सोचती है कि वह कितना गलत सोच रही थी। शैलेन्द्र के प्रति उसके मन में सम्मान व प्रेम का भाव और भी बड़ जाता है। इसी बीच डाकिया मनीआर्डर और एक चेक लेकर आ जाता है। शैलेन्द्र मनीआर्डर के पैसे और चेक शारदा को सौंपते हुए कहता है कि चेक किसी को देकर बैंक से पैसे मंगा ले और उसके जैसे निकम्मों पर वह नाराज होकर अपना खून न जलाया करें। अब वह क्या सुधरेगा शारदा को ही उसके साथ निभाना होगा, उसे संभालना होगा।

इस प्रकार शैलेन्द्र के सच्चे प्रेम व समर्पण को देखकर शारदा का क्रोध शांत हो जाता है और वह शैलेन्द्र को छोड़कर जाने का इरादा छोड़ देती है और अपनी छोटी व खूबसुरत गृहस्थी को सँभालने में लग जाती है।

१०.३ 'और वह जा न सकी' एकांकी के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

शारदा:

'और वह जा न सकी' एकांकी की केन्द्रीय पात्र शारदा है। शारदा एक कर्तव्य परायण स्त्री है। अपने यौवन के प्रारंभिक दिनों में उसने शैलेन्द्र को अपने पति के रूप में चुना था। शैलेन्द्र की विद्वत्ता व उसके लेखक व्यक्तित्व ने उसे शैलेन्द्र की ओर आकर्षित किया था। उस समय उसकी सहेलियों ने उसे एक व्यावहारिक सलाह दी थी कि वह एक ऐसे युवक से विवाह करे जिसके पास एक स्थायी आय का साधन हो और वह तमाम लौकिक इच्छाओं को शांत कर सके। पर उस समय शारदा इस व्यावहारिक सलाह को न समझ सकी और न उसे माना। उसने शैलेन्द्र के आकर्षण को अपने ऊपर हावी हो जाने दिया और अंततः स्वप्नदर्शी शैलेन्द्र की जीवन संगिनी बन गई।

प्रारंभ में उसके गृहस्थी की गाड़ी ठीक-ठाक चलती रही। अभावों को भी उसने स्वीकार कर लिया किंतु धीरे-धीरे जैसे-जैसे शैलेन्द्र लिखने-पढ़ने की दुनिया में डूबता चला गया वह गृहस्थी की जरूरतों के प्रति लापरवाह होता चला गया। कमाई का कोई ठीक-ठाक जरिया न था, शैलेन्द्र की फरमाइशें रोज दररोज बढ़ती जाती थीं और इन फरमाइशों को पूरा करने के लिए शारदा दिन रात खटती रहती थी। घर पर अभावों का मेला रोज ही लगा रहता था। कभी-कभी पड़ोसियों से भी दाल-चावल-आटा उधार माँगना पड़ता था। शैलेन्द्र की उदासीनता व अभावों से तंग आकर शारदा यह निर्णय लेती है कि वह अब शैलेन्द्र के साथ और नहीं निभा सकती। उसे अपने रास्ते को अब अलग करना होगा।

इसी बीच शैलेन्द्र के जीवन में शीला का प्रवेश होता है। शीला शैलेन्द्र के निकट आना चाहती है पर शैलेन्द्र उसके प्रति कोई विशेष रूझान नहीं दिखाता। एक दिन शीला शैलेन्द्र से कहती है कि अब वह अपने पति के साथ और नहीं रह सकती वह कल ही शैलेन्द्र के पास आ जाएगी। इस पर शैलेन्द्र उससे साफ-साफ कह देता है कि यह घर उसका नहीं है।

शारदा का है और यदि वह यहाँ आना चाहती है तो उसे शारदा से इजाजत लेनी होगी। यहाँ तक कि वह जो भी है उसमें शारदा का एक बहुत बड़ा योगदान है। शारदा के बिना वह कुछ भी नहीं है। शारदा पीछे छिपी यह सब सुन रही होती है। उसे इस बात का अहसास हो जाता है कि शैलेन्द्र एक बेहद ईमानदार व समर्पित व्यक्ति है। उसे अपने सारे अभाव शैलेन्द्र की सच्चाई के आगे छोटे लगने लगते हैं और अंततः वह शैलेन्द्र को न छोड़कर जाने का निर्णय लेती है।

शैलेन्द्र:

एकांकी का दूसरा महत्वपूर्ण पात्र शैलेन्द्र है। शैलेन्द्र एक लेखक है। लेखक के रूप में उसे सामाजिक रूप से स्वीकृति मिल चुकी है किंतु वह अपने गृहस्थी जीवन के प्रति बहुत लापरवाह व गैरजिम्मेदार है। कमाई का कोई ठीक-ठाक और नियमित जरिया वह विकसित नहीं कर सका है। उसकी इस प्रवृत्ति का खामियाजा शारदा को उठाना पड़ता है। शारदा को गृहस्थी की गाड़ी खींचना दिन-ब-दिन और भी कठिन लगने लगता है। घर में हमेशा अभाव बना रहता है। कभी दाल नहीं तो कभी चावल नहीं तो कभी आटा खत्म हो जाता है और पड़ोसियों के घर का रूख करना पड़ता है। पड़ोसी भी इस सबसे तंग आ चुके है और एक दिन पड़ोसन शशि आटा देने से इंकार कर देती है। घर की इस अभावग्रस्त स्थिति को सुधारने के लिए शैलेन्द्र कोई प्रयत्न नहीं करता बल्कि दिन-ब-दिन अपने सामाजिक दायरे का विस्तार करके चार-छह लोगों को रोज घर पर बुलाता है और सभी के चाय-नाश्ते की जिम्मेदारी शारदा पर ड़ाल देता है। शारदा बेचारी खटते हुए पड़ोसियों से उधार मांगकर सारी जिम्मेदारियों को निभाती तो है पर उसे निरंतर पति का यह गैरजिम्मेदाराना व्यवहार सालता है।

शैलेन्द्र की लापरवाहियों व अभाव भरी जिन्दगी से तंग आकर अंततः घर छोड़कर चले जाने का निर्णय लेती है। पर इसी बीच जब शैलेन्द्र शीला को यह बताता है कि शारदा के बिना इसका कोई अस्तित्व नहीं है। आज वह जो भी है उसमें शारदा का बहुत बड़ा योगदान है तब शारदा की आँखें खुल जाती हैं और वह शैलेन्द्र को कभी भी न छोड़ने का निर्णय लेती है। मनीआर्डर के रूपये व चेक शारदा को सौंपते हुए शैलेन्द्र कहता है – शारदा अब हम क्या सुधरेंगे, तुम्हीं को निभाना पड़ेगा, निभा लो। इस पर शारदा का रहा सहा क्रोध भी उड़ जाता है और वह शैलेन्द्र को बड़े प्यार से झिड़कते हुए कहती है, "हटो-हटो क्या अंट-संट बोलते हो। बैठक में जाकर अपना काम करो।" इस प्रकार शैलेन्द्र की ईमानदारी व समर्पण भाव से उसकी गृहस्थी टूटने से बच जाती है।

१०.४ सारांश

प्रस्तुत एकांकी 'और वह जा न सकी' में शैलेन्द्र पारिवारिक जिम्मेदारियों को निभाने में असफल होता है, उसका मनोवैज्ञानिक तौर पर चित्रण किया है। साथ ही उसकी ईमानदारी और सच्चे प्रेम तथा समर्पण को देखकर पत्नी शारदा छोड़कर जाने के निर्णय को पूर्णविराम देती है। टूटती हुई गृहस्थी को बचाती हैं।

१०.५ लघुत्तरीय प्रश्न

१. 'और वह जा न सकी' में किसकी गृहस्थी टूटने से बच जाती है?

उ - शैलेन्द्र और शारदा की।

२. शारदा को शादी करने के बाद किस सलाह की याद आती है?

उ - सहेलियों ने केवल स्वप्नदर्शी रचनाकार से विवाह करने मना किया था इस सलाह की याद आती है।

३. शैलेन्द्र पेशे से क्या हैं?

उ - शैलेन्द्र पेशे से लेखक है।

१०.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१. 'और वह जा न सकी' एकांकी के आधार पर शैलेन्द्र व शारदा का चरित्र-चित्रण कीजिए।

२. 'और वह जा न सकी' एकांकी में चित्रित दाम्पत्य जीवन के संघर्ष व सामंजस्य भाव पर प्रकाश डालिए।

३. 'और वह जा न सकी' एकांकी के कथ्य पर प्रकाश डालते हुए एकांकी के संदेश को समझाइए।

१०.७ संदर्भ ग्रंथ

१. एकांकी - सुमन (एकांकी संग्रह) - सं. हिंदी अध्ययन मंडल, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई

*****

munotes.in

११

बहू की विदा

इकाई की रूपरेखा

११.० इकाई का उद्देश्य
११.१ प्रस्तावना
११.२ 'बहू की विदा' एकांकी की कथावस्तु
११.३ 'बहू की विदा' एकांकी के प्रमुख पात्र
११.४ सारांश
११.५ लघुत्तरीय प्रश्न
११.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न
११.७ टिप्पणियाँ
११.८ संदर्भ ग्रंथ

११.० इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य विनोद रस्तोगी के एकांकी 'बहू की विदा' के विविध पक्षों को विद्यार्थियों के सामने रखना है। इस इकाई के पठन के द्वारा विद्यार्थी 'बहू की विदा' के विविध पक्षों से परिचित हो सकेंगे और भारतीय समाज में व्याप्त दहेज के घिनौने व बहुस्तरीय रूप से परिचित हो सकेंगे।

११.१ प्रस्तावना

'बहू की विदा' विनोद रस्तोगी द्वारा लिखित एक अत्यंत लोकप्रिय एकांकी है। इस एकांकी के द्वारा विनोद रस्तोगी ने भारतीय समाज में व्याप्त दहेज प्रथा के अत्यंत घिनौने रूप को पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है। पढ़े लिखे और संपन्न वर्ग में यह प्रथा जिस प्रकार जड़े जमा रही है वह बेहद चिंतनीय है। जीवनलाल एक प्रौढ़ उम्र था धनी-व्यापारी है। पैसे और सुख-सुविधाओं की उसे कोई कमी नहीं है, फिर भी दहेज का इतना बड़ा लोभी है कि वह अपनी बहू के दहेज से असंतुष्ट है और उसे सावन में अपने भाई के घर विदा करने से इंकार कर देता है। बहू को विदा करने की एवज में वह पाँच हजार रूपए नगद माँगता है। दूसरी तरफ उसे इस बात का घमंड़ भी है कि उसने अपनी बेटी गौरी की शादी खूब दहेज देकर की है। और आज गौरी के घरवाले उसे सम्मान के साथ मायके भेजेंगे। परंतु उसे ठेस तब लगती है जब गौरी को विदा कराके लाने गया उसका अपना बेटा रमेश खाली हाथ आ जाता है और गौरी के घरवाले उसे और दहेज की लालच में मायके भेजने से इंकार कर देते हैं। लेखक इस एकांकी के द्वारा यह बताना चाहता है कि किस तरह 'जैसे के साथ तैसा' व्यवहार समाज में होता है। दहेज जैसी प्रथा यदि बंद न की गई तो एक न एक दिन यह हर

munotes.in

व्यक्ति को दुख देगी। दूसरे की बेटी को दुख देकर हम भी सुखी न रह सकेंगे। दहेज की पीड़ा को हमें भी झेलना होगा।

११.२ 'बहू की विदा' एकांकी की कथावस्तु

'बहु की विदा' यह विनोद रस्तोगी का चर्चित एकांकी है। इस एकांकी ने भारतीय समाज में व्याप्त दहेज़ प्रथा पर करारी चोट की है। इस एकांकी के माध्यम से एकांकीकार भारतीय समाज को यह संदेश देना चाहते हैं कि यदि समय रहते हमने दहेज जैसी अमानवीय प्रथा पर रोक नहीं लगाई तो हमारे समाज का हर वर्ग इस प्रथा से भयंकर रूप से प्रभावित होगा और इसका सबसे बड़ा खामियाजा हमारी बेटियों तथा बहनों को उठाना होगा।

एकांकी के केन्द्र में सेठ जीवनलाल का चरित्र है। सेठ जीवनलाल एक बेहद सफल, संपन्न व धनी-मानी व्यापारी है, पर पैसे का बड़ा लालची है। वह इस बात से खुश नहीं है कि उसे एक अच्छी व सेवाभावना रखनेवाली नेक बहु मिली है बल्कि वह इस बात से नाराज है कि उसकी बहू ढ़ेर सारा दहेज लेकर नहीं आई। इसी नाराजी के कारण जब सावन में बहू का भाई उसे मायके विदा कराने के लिए आता है तब सेठ जीवनलाल उसे न विदा करने पर अड़ जाता है और बहू कमला के भाई प्रमोद को खरी-खोटी सुनाते हुए इस बात पर अड़ जाता है कि जब तक वह दहेज के पाँच हजार रूपये नगद लाकर उसकी हथेली में नहीं रख देता तब तक वह कमला की बिदाई नहीं करेगा। वह प्रमोद से कहता है कि ये पाँच हजार रूपये उसके लिए मरहम का काम करेंगे। इसी मरहम से उसके अपमान का घाव भरेगा और उसके बाद ही वह कमला को विदा करेगा। सेठ जीवनलाल प्रमोद के सामने अपनी बेटी की शादी का प्रसंग रखते हुए कहता है कि देखो मैंने भी अपनी बेटी गौरी की शादी की है, पर कितने धूम-धाम से, जी-खोलकर दहेज दिया, बारात के स्वागत में कोई कमी नहीं रखी जिन्होंने देखा दातों तले उंगली दबा ली। वह प्रमोद को खरी-खोटी सुनाते हुए कहता है कि उसने और उसकी माँ ने उसकी नाक काट ली बारातियों का स्वागत और खान-पान भी वे ठीक से नहीं कर सके। उनके इस व्यवहार से उसे बड़ी ठेस पहुँची है, उसके दिल को चोट लगी है। यह घाव तो जब तक नहीं भरेगा तब तक वह दहेज के पाँच हजार रूपये लाकर दे जाएगा। जब वह पाँच हजार रूपये नगद लाकर हथेली पर रख देगा तब ही वह उसकी बहन कमला को विदा करेगा। जीवनलाल के इस व्यवहार का विरोध उसकी पत्नी राजेश्वरी करती है। राजेश्वरी उसे धिक्कारते हुए कहती है कि आखिर तुम भी तो किसी बेटी के पिता हो, यदि ऐसा व्यवहार तुम्हारी बेटी के साथ हो तो तुम्हें कैसा लगेगा? परंतु अपने अहंकार और लोभ में डूबा हुआ जीवनलाल उसे डांट देता है।

मामले को न सुलझते देखकर राजेश्वरी प्रमोद से कहती है कि मैं तुम्हें पाँच हजार रूपये देती हूँ जाकर जीवनलाल के मुँह पर मारकर कह दो कि ये लो कागज के रंग-बिरंगे टुकडे, जिन्हें तुम आदमी से ज्यादा प्यार करते हो। किंतु प्रमोद और कमला उसके इस अनुग्रह को स्वीकार नहीं करते और ससम्मान इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर देते हैं।

इधर दूसरी तरफ जीवनलाल का बेटा रमेश जो अपनी बहन गौरी को बिदा कराने के लिए गया था, वह खाली हाथ लौट आता है। जीवनलाल के पुछने पर वह बताता है कि गौरी के घरवालों ने उसे विदा करने से मना कर दिया है क्योंकि उन्हें और दहेज चाहिए। गौरी के

ससुराल पक्ष के द्वारा किया गया यह व्यवहार जीवनलाल के लिए एक सीख साबित होता है। राजेश्वरी उसे समझाती है कि वह जैसा व्यवहार दूसरों की बेटी के साथ करेगा वैसा ही व्यवहार उसकी अपनी बेटी के साथ होगा। उसे बेटी और बहू के बीच अंतर नहीं करना चाहिए। राजेश्वरी के समझाने के बाद जीवनलाल के व्यवहार में परिवर्तन आ जाता है वह अपनी गलती को स्वीकार करते हुए उसे सुधारता है और बिना किसी अन्य दहेज के वह कमला की बिदाई के लिए तैयार हो जाता है। अपनी गलती को स्वीकार करते हुए वह प्रमोद से कहता है, “मुझ और लज्जित न करो बेटा! मेरी चोट क इलाज बेटी की ससुराल वालों ने दूसरी चोट से कर दिया।....XXX... कभी-कभी चोट भी मरहम का काम कर जाती है, बेटा।”

इस प्रकार यह एकांकी एक सुखांत एकांकी है। अपने कथ्य के माध्यम से दहेज के लोभियों को यह संदेश देता है कि बेटी और बहू में अंतर नहीं करना चाहिए। और दहेज जैसे अमानवीय प्रथा से बचना चाहिए।

११.३ ‘बहू की विदा’ एकांकी के प्रमुख पात्र

जीवनलाल:

जीवनलाल ‘बहू की विदा’ एकांकी का एक महत्वपूर्ण पात्र है। उम्र में ५० वर्ष पार कर चुका जीवनलाल एक धनी व्यापारी है। पैसा ही उसका दीन-ईमान है। पर्याप्त मात्रा में पैसे कमाने के कारण उसमें पैसे का घमंड आ चुका है। वह हर चीज को पैसे से तौलता है। कमला के भाई रमेश से जीवनलाल पाँच हजार रूपए की मांग अतिरिक्त दहेज के रूप में करता है। जीवनलाल मिले हुए दहेज से संतुष्ट नहीं है। कमला का भाई प्रमोद जब पहले सावन के अवसर पर उसे विदा कराने आता है तो जीवनलाल कमला को विदा करने से इंकार कर देता है और पाँच हजार रूपए नगद की शर्त रखता है। जीवनलाल प्रमोद से कहता है कि जब पाँच हजार रूपए नगद लाकर वह उसकी हथेली पर रख देगा तभी वह बहू अर्थात कमला को सावन के अवसर पर विदा करेगा।

प्रमोद लाख मिन्नतें करता है, अपनी गरीबी का हवाला देता है। परिवार की विषम स्थितियों को बताता है, पर जीवनलाल कोई भी तर्क स्वीकार नहीं करता और दहेज को लेकर वह अपनी मांग पर अड़ा रहता है। अपने धन-ऐश्वर्य का प्रदर्शन करते हुए वह अपनी बेटी गौरी की शादी का हवाला देता है। वह कहता है देखो हमने भी अपनी बेटी गौरी की शादी की है। इतना दहेज दिया और ऐसी खातिरदारी की कि बारातवाले देखकर दंग रह गए। देखनेवालों ने दाँतों तले उँगली दबा ली। मेरा बेटा रमेश गौरी को विदा कराने थोड़ी देर में लाता ही होगा। बेटीवाले होकर भी हमारी मूँछ ऊँची है।

जीवनलाल को धक्का उस समय लगता है जब रमेश खाली हाथ वापस आ जाता है। रमेश जब उसे बताता है कि बहन गौरी के ससुराल वालों ने उसे सावन में भेजने से इंकार कर दिया क्योंकी उन्हें और दहेज चाहिए। वे कह रहे है कि रक्कम पूरी नहीं दी है। जब तक पूरा दहेज नहीं दे दिया जाएगा तब तक गौरी को वे विदा नहीं करेंगे। इसी बीच राजेश्वरी जो जीवनलाल की पत्नी है परिदृश्य में आ जाती है, और वह जीवनलाल को समझाती है कि दूसरों की बेटी के साथ भी वही व्यवहार करो जो तुम अपनी बेटी के साथ होते हुए देखना

चाहते हो। अरे अब तो आँख खोलो जब तक बहू और बेटी को एक-सा नहीं समझोगे, न सुख मिलेगा और न शांति। पत्नी के समझाने के बाद जीवनलाल को समझ में आ जाता है कि वह बहू कमला के साथ कितना बड़ा अन्याय कर रहा था और अंततः वह दहेज की जिद छोड़ देता है और बहू कमला को उसके भाई प्रमोद के साथ विदा करने के लिए तैयार हो जाता है।

प्रमोद:

प्रमोद कमला का भाई है। २३ वर्ष की अवस्था का नवयुवक है। अपनी बहन कमला को विदा कराने के लिए वह उसके घर पहूँचता है पर उसे तब ठेस लगती है जब बहन का ससुर जीवनलाल कमला को विदा करने से इंकार कर देता है। जीवनलाल कहता है कि उसे दहेज कम मिला है। यहाँ तक बारात को खिलाने-पिलाने में भी कतरब्यौंत बरती गई इससे बिरादरी में उसकी बड़ी हँसी हुई और उसके सम्मान में करारी चोट लगी है। अब जब तक पाँच हजार रूपए मरहम के रूप में उसे नहीं मिल जाते तब तक वह कमला को विदा नहीं करेगा। प्रमोद जीवनलाल से प्रार्थना करता है और कहता है गौने में वह उनके लिए मरहम जरूर जुटा लेगा पर जीवनलाल मानने के लिए तैयार नहीं होता। प्रमोद अपनी बूढ़ी माँ, घर की गरीबी और अपनी मजबूरी का हवाला देता है पर जीवनलाल टस से मस नहीं होता। वह प्रमोद पर व्यंग्य करते हुए कहता है कि यदि इतने गरीब हो तो अपनी बराबरी के किसी गरीब घर में विवाह क्यों नहीं करवाया, हमारे जैसे धनी-मानी घर में बहन का रिश्ता क्यों जोड़ा ? तुम्हें अपनी बराबरी का ख्याल रखना चाहिए था।

जीवनलाल की जिद और अपनी मजबूरी के चलते प्रमोद अंततः घर बेचने का निर्णय लेता है। कमला को आश्वस्त करते हुए वह कहता है कि इतनी गिरी हुए स्थिति में भी घर सात-आठ हजार में बिक जाएगा। तुम चिंता मत करो मैं जीवनलाल के लिए अगली बार मरहम जरूर लाऊँगा और तुम्हें विदा कराके ले जाऊँगा। किंतु इसी बीच जब जीवनलाल को अपनी बेटी गौरी के घर से दहेज की ठेस लगती है तो उसे सद्बुद्धि आ जाती है और वह प्रमोद व कमला के प्रति अपनी राय को बदलते हुए बहू की विदा के लिए राजी हो जाता है।

राजेश्वरी:

राजेश्वरी जीवनलाल की पत्नी है किंतु बेहद सुलझी हुई व मानवीय गुणों से भरी संवेदनशील महिला है। जीवनलाल अपने धन के ऐश्वर्य में एक घमंड़ी व्यक्ति है वहीं राजेश्वरी एक संवेदनशील, विनम्र तथा परदुखकातर स्त्री है। जीवनलाल जब दहेज में पाँच हजार अतिरिक्त रूपयों की मांग प्रमोद से करता है और उसके बिना कमला को विदा करने से इंकार कर देता है तब राजेश्वरी प्रमोद की मदत के लिए आगे आती है और प्रमोद को वह आश्वस्त करती है कि वह उसे पाँच हजार रूपये दे देगी। वह उस रूपये को जीवनलाल को देकर अपनी बहन को ससम्मान विदा कराके सावन के अवसर पर ले जाए। राजेश्वरी जीवनलाल का विरोध करते हुए प्रमोद को आश्वस्त करती है कि वह निश्चिंत रहे उसके बहन की विदा होगी। वह भी एक माँ है और माँ के ह्रदय की छटपटाहट को वह समझती है। वह कमला को तिजोरी की चाभी दे देती है तथा पाँच हजार रूपये निकालकर प्रमोद को देने के लिए कहती है। किंतु प्रमोद व कमला इससे झिझकते हैं। इसी बीच जब रमेश गौरी के घर

से खाली हाथ लौटता है और बताता है कि गौरी के घरवाले और ज्यादा दहेज की मांग कर रहे हैं तथा उसके अभाव में वे विदा करने के लिए बिलकुल तैयार नहीं है। तब जीवनलाल के घमंड को धक्का लगता है और उसे वास्तविकता का बोध हौता है। राजेश्वरी इस समय भी उसे समझाती है। राजेश्वरी उसे समझाते हुए कहती है "अब भी आँखे नहीं खुलीं, जो व्यवहार अपनी बेटी के लिए तुम दूसरों से चाहते हो, वही दूसरे की बेटी को भी दो। जब तक बहू और बेटी को एक सा नहीं समझोगे, न सुख मिलेगा और न शांति।" इस प्रकार बहुत मुखर होकर राजेश्वरी जीवनलाल के गलत कार्य का विरोध करती है और उसे समझाते हुए कमला की विदा के लिए राजी कर लेती है। इस प्रकार राजेश्वरी एक महत्वपूर्ण चरित्र के रूप में एकांकी में आती है।

११.४ सारांश

'बहू की विदा' एकांकी में भारतीय समाज में सदियों से चलती आ रही प्रथा को दर्शाया गया है। सेठ जीवनलाल ने अपनी बेटी को दहेज देकर विदा किया था उसी तरह से दूसरे परिवारों की और से अपेक्षा रखता है। लेकिन यह अपेक्षा पूरी होने से पहले ही बेटी के ससुराल की ओर से दहेज की मांग की जाती है यह सुनते ही बहू कमला के साथ बड़ा अन्याय कर रहा था यह बात उसे समझ में आती है और बहू कमला को विदा कर देता है।

११.५ लघुत्तरीय प्रश्न

१. 'बहू की विदा' एकांकी के लेखक कौन है?

उ - विनोद रस्तोगी 'बहु की विदा' एकांकी के लेखक है।

२. 'बहू की विदा' में भारतीय समाज में व्याप्त किस प्रथा को दर्शाया है?

उ - भारतीय समाज में चलनेवाली दहेज प्रथा को 'बहू की विदा' एकांकी में दर्शाया गया है।

३. सेठ जीवनलाल दहेज के रूप में प्रमोद से कितने रुपयों की मांग करता है?

उ - सेठ जीवनलाल दहेज के रूप में पांच हजार की मांग प्रमोद से करता है।

४. 'बहू की विदा' एकांकी में दहेज प्रथा का विरोध कौन करती है?

उ - 'बहू की विदा' एकांकी में सेठ जीवनलाल की पत्नी राजेश्वरी दहेज प्रथा का विरोध करती है।

११.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१. 'बहू की विदा' एकांकी के आधार पर जीवनलाल के चरित्र पर प्रकाश डालिए।

२. 'बहू की विदा' एकांकी के कथ्य पर प्रकाश डालते हुए उसके संदेश को समझाइए।

munotes.in

३. ‘बहू व बेटी को एक दृष्टि से देखने की आवश्यकता है।’ बहु की विदा एकांकी के आधार पर इस वाक्य के औचित्य को स्पष्ट कीजिए।

११.७ टिप्पणियाँ

१. जीवनलाल

२. राजेश्वरी

३. कमला

४. प्रमोद

११.८ संदर्भ ग्रंथ

१. एकांकी - सुमन (एकांकी संग्रह) - सं. हिंदी अध्ययन मंडल, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई

*****

munotes.in

१२

रात के राही

इकाई की रूपरेखा

१२.० इकाई का उद्देश्य

१२.१ प्रस्तावना

१२.२ 'रात के राही' एकांकी की कथावस्तु

१२.३ 'रात के राही' एकांकी के प्रमुख पात्र

१२.४ सारांश

१२.५ लघुत्तरीय प्रश्न

१२.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१२.७ टिपण्णी

१२.८ संदर्भ ग्रंथ

१२.० इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य 'रात के राही' एकांकी के सभी पक्षों को विद्यार्थियों के समक्ष रखना है। इस इकाई के माध्यम से विद्यार्थी 'रात के राही' एकांकी के पात्रों, कथ्य, भाषा-शैली तथा एकांकी के उद्देश्य से परिचित हो सकेंगे।

१२.१ प्रस्तावना

'रात के राही' एकांकी में मेजर वर्मा व मिस लीला के बीच एक रात में घटे घटनाक्रम का वर्णन है। रात में होनेवाली इन घटनाओं का संबंध एक रेलयात्रा से है। रात की इस रेलयात्रा में मिस लीला मेजर वर्मा को अपने रूप-सौंदर्य में फंसा कर उन्हें ब्लैकमेल करना चाहती हैं। मिस लीला मेजर वर्मा के चरित्र पर कीचड़ उछालती है पर मेजर वर्मा अपनी चरित्रिक दृढ़ता व समझदारी से मिस लीला के षड़यंत्र को पुलिस के सामने उजागर कर देते हैं और मिस लीला को पुलिस के द्वारा गिरफ्तार कर लिया जाता है।

१२.२ 'रात के राही' एकांकी की कथावस्तु

'रात के राही' एकांकी ब्रजभूषण का एक महत्वपूर्ण एकांकी है। इस एकांकी के माध्यम से ब्रजभूषण यह बताने की कोशिश करते हैं कि किस तरह मिस लीला जैसे लोग मेजर वर्मा जैसे लोगों को अपने रूप सौंदर्य के जाल में फंसाकर उन्हें ब्लैकमेल करते हैं तथा ज्यादा से ज्यादा रूपये उगाहने की कोशिश करते हैं। किंतु मेजर वर्मा जैसे अच्छे चरित्र व पारखी निगाहों के लोग इस षड़यंत्र को पहचानकर समय रहते उससे बचने व षड़यंत्र के भंडाफोड़ का तरीका निकाल लेते हैं।

munotes.in

मेजर वर्मा सेना के रिटायर्ड मेजर हैं और पेंशन पर जीवन जी रहे हैं। वे पेंशन लेकर रात की गाड़ी से वापस लौट़ रहे हैं। उनके पास १५ हजार रूपये हैं, इस बात की भनक मिस लीला को लग जाती है। मिल लीला पेशेवर ब्लैकमेलर है। वह मेजर वर्मा को अपने जाल में फंसाकर १५ हजार रूपये उनसे ले लेना चाहती है। पहले मिस लीला एक सभ्य परिवार की लड़की होने का स्वांग करती है। फिर अपनी गरीबी व शादी के शगुन के लिए पैसे की मांग करने लगती है। वह कहती है कि मेजर उसे पैसे उधार दे दे कुछ दिनों में उसका भाई जो मुंबई की एक बड़ी फर्म में काम करता है वह जब वापस आएगा तो वह मेजर के पैसे लौटा देगी। इसी बीच मेजर की उसके रहने के तरीके व कपड़ों लत्तों से कुछ शक होने लगता है और वह समझ जाता है कि मिस लीला जैसी दिख रही हैं या दिखा रही हैं वह उनका सच नहीं है।

कुछ और समय बीतने पर मेजर वर्मा मिस लीला से पानी पिला देने का आग्रह करते हैं। और कहते हैं सर्दी ज्यादा होने के कारण वे ओवरकोट से अपना हाथ बाहर नहीं निकाल सकते इसलिए बड़ी मेहरबानी होगी कि मिस लीला पानी के गिलास को उनके होंठों से लगा दे। मिस लीला हिचकते हुए पानी का ग्लास मेजर वर्मा के ओंठों से लगा देती हैं पर उनके अंदर बैठा शातिर दिमाग मेजर को फांसने की फितरत में लग जाता है। वह बार-बार मेजर से पैसे उधार देने का आग्रह करती है। कुछ देर बाद मेजर वर्मा को छींक आती है और वह मिस लीला से आग्रह करता है कि वह बास्केट में से रूमाल निकालकर उसकी नाक पोंछ दे तो बड़ी मेहरबानी होगी। मिस लीला पहले तो झिझकतीं है पर बाद में वे मेजर वर्मा की नाक रूमाल से साफ कर देती हैं किंतु इसके साथ ही उनका साहस भी बढ़ जाता है और वे मेजर वर्मा से १५ हजार रूपये की मांग कर बैठती हैं तथा न देने की स्थिति में बुरे अंजाम को भुगतने की भी धमकी देती हैं। मेजर वर्मा को धमकाते हुए वह कहती है कि यदि १५ हजार रूपये उन्होंने उसे शराफत से नहीं दिया तो वह गाड़ी की जंजीर खींच लेगी और सभी से चिल्लाकर कहेंगी कि मेजर वर्मा ने उसकी इज्जत पर हाथ ड़ाला। इस प्रकार मेजर की सारी इज्जत धूल में मिल जाएगी और पुलिस जो कारवाई करेगी वह अलग मेजर के लिए समस्या खड़ी करेगी। मेजर समझ जाते हैं कि वे एक ब्लैकमेलर के जाल में फंस गए हैं पर वे अपने साहस को बनाए रखते हुए मिस लीला को जंजीर खींचने के लिए कहते हैं और मिस लीला सचमुच ही जंजीर खींच लेती हैं तथा गार्ड के आनेपर मेजर की ओर इशारा कर उस पर अपनी इज्जत पर हाथ डालने का आरोप लगाती हैं। अगले स्टेशन पर पुलिस के सामने मामले को रखा जाता है। पुलिस के आने पर वह इंस्पेक्टर से कहतीं है कि मेजर वर्मा ने उसकी इज्जत पर हाथ ड़ालने की कोशिश की है। मेजर ने चलती ट्रेन में उसे जबरदस्ती पकड़ लिया तथा उसके मुँह को बंद कर के जबरदस्ती उसने उसे बर्थ पर पटक दिया। पर उसने साहस के साथ काम करते हुए मेजर के सीने पर लात से जोरदार प्रहार किया और उसे धकेल कर अपने-आपको उसकी पकड़ से आजाद करवाया।

मिस लीला के बयान के बाद इंस्पेक्टर मेजर से अपना बयान देने के लिए कहते हैं। पर मेजर कहता है कि पहले इंस्पेक्टर उसका ओवरकोट उतारे तभी वह अपना बयान देगा। इस पर इंस्पेक्टर अनमने मन से बहुत ठंडी प्रतिक्रिया देता है। इस पर मेजर का आवेश बढ़ जाता है और वह इंस्पेक्टर पर जोर से चिल्लाता है। इंस्पेक्टर झुंझलाते हुए मेजर के कोट को खींचता है तो सभी देखकर हैरान हो जाते हैं। मेजर की दोनों भुजाएं नहीं थीं। गोली लगने के कारण उन्हें काटना पड़ा था। इंस्पेक्टर को सारी बात समझ में आ जाती हैं। वह

समझ जाता है कि मिस लीला मेजर को फंसाने की कोशिश कर रही हैं और वह अपने सिपाहियों को उस लड़की अर्थात मिस लीला को पकड़ने का आदेश देता है। मेजर मिस लीला को उपदेश देते हुए कहता है "मिस लीला बाहर की बात को असल बात समझकर बहुत से लोग बहुत भूल करते हैं, तुम आगे ऐसी भूल मत करना।"

इस प्रकार अपनी सूझ-बूझ से मेजर वर्मा अपने ऊपर आए संकट से निपटते हैं और मिस लीला को पुलिस को पकड़वाने में सफल होते हैं।

१२.३ 'रात के राही' एकांकी के प्रमुख पात्र

मेजर वर्मा:

मेजर वर्मा 'रात के राही' एकांकी के प्रमुख पात्र हैं। मेजर वर्मा सेना के रिटायर्ड अधिकारी है और पेंशन पर अपना जीवनयापन करते हुए पारिवारिक उत्तरदायित्वों व सामाजिक जिम्मेंदारियों को निभा रहे है। एक बार जब वे पेंशन के रूपए लेकर लौट रहे थे और उनके पास १५ हजार रूपयों की ठीक-ठाक रकम थी तभी वे ब्लैकमेलर मिस लीला के शिकार हो जाते हैं। मिस लीला इस बात को भांप लेती है कि मेजर के पास ठीक-ठाक रूपये हैं और उसे अपने रूप – सौंदर्य के जाल में फंसाकर ब्लैकमेल करना चाहती हैं। पहले तो वह अपनी गरीबी व पारिवारिक मजबुरियों का हवाला देते हुए मेजर से पैसे उधार मांगती है किंतु उधार न मिलता देखकर वह अपने वास्तविक चरित्र पर उतर आती है। वह मेजर को धमकाते हुए कहती हैं कि या तो मेजर उसे १५ हजार रूपये सीधे से दे दे, अथवा वह गाड़ी की चेन खींचकर उस पर अपनी इज्जत पर हाथ ड़ालने का आरोप लगाएगी। वह करती भी ऐसा ही है, पर मेजर इस संकट से नहीं डरता और इंस्पेक्टर से अपना ओवरकोट उतरवाकर अपनी दोनों कटी हुई भुजाओं को दिखाता है और यह साबित कर देता है कि मिस लीला जो भी कुछ कह रही थी वह झूठ था। इंस्पेक्टर मिस लीला के वास्तविक चरित्र को समझ जाता है और उसे गिरफ्तार करके जेल में ड़ाल देता है और मेजर से माफी मांगते हुए खेद प्रकट करता है।

मिस लीला:

मिस लीला 'रात के राही' एकाकी की दूसरी महत्वपूर्ण पात्र हैं। निम्नमध्यम परिवार से संबंध रखनेवाली मिस लीला एक अति महत्वांकाक्षी व शातिर लड़की है। मेहनत करके कमाने व संयमित जीवन जीने के स्थान पर उसने ब्लैकमेलिंग के द्वारा ज्यादा व आसान पैसे बनाने का तरीका चुना है। ट्रेन के फर्स्ट-क्लास डिब्बे के मासूम यात्री उसके शिकार बनते है। इसी क्रम में वह मेजर वर्मा को भी फंसाने व लूटने की कोशिश करती है। पहले वह मेजर को अपनी बातों में फंसाना चाहती है घर की गरीबी का हवाला देकर उससे रूपयें उधार मांगती है पर जब मेजर पर उसकी यह चाल नहीं चलती तो वह धमकी देने पर उतर आती है। वह मेजर पर अपनी इज्जत पर हाथ ड़ालने का आरोप लगाती है। पुलिस की पूछताछ में वह बयान भी इसी प्रकार का देती है और मेजर द्वारा अपनी साड़ी को खींचे जाने, बलात बर्थ पर पटके जाने का आरोप लगाती है। किंतु मेजर जब अपनी दोनों कटी बाहों को दिखाता है तो मिस लीला की चाल वह समझ जाता है और मिस लीला को पकड़ने का आदेश सिपाहियों को देते हुए मेजर वर्मा से माफी मांगता है।

इस प्रकार मेजर वर्मा की सूझ-बूझ से मिस लीला अपने ही इस बिछाये जाल में उलझ जाती है।

१२.४ सारांश

प्रस्तुत एकांकी में सेना के सेवानिवृत्त मेजर वर्मा पेंशन लेकर यात्रा कर रहे थे। उसी वक्त ट्रेन में मिस लीला ब्लैकमेल करने की कोशिश करती है और पुलिस के सामने इज्जत लूटने का आरोप मेजर वर्मा पर लगाती है। परन्तु मेजर वर्मा समय पर मिस लीला की चाल को पहचान लेता है और षड़यंत्र से बच जाता है।

१२.५ लघुत्तरीय प्रश्न

१. मिस लीला अपने रूप सौंदर्य के जाल में किसे फसाती है?

उ - मेजर वर्मा को।

२. मेजर वर्मा रात की गाड़ी से क्या लेकर लौट रहे थे?

उ - पेंशन।

३. मेजर वर्मा को कितने रुपयों की पेंशन मिलती है?

उ - मेजर वर्मा को १५ हजार रुपये की पेंशन मिलती है।

१२.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१. 'राक के राही' एकांकी के कथ्य पर प्रकाश डालते हुए उसके संदेश को समझाइए।

२. 'राक के राही' एकांकी के आधार पर मेजर वर्मा के चरित्र का चित्रण कीजिए।

३. 'राक के राही' एकांकी के आधार पर मिस लीला के शातिर चरित्र का उद्घाटन कीजिए।

१२.७ टिप्पणी

१. मेजर वर्मा

२. मिस लीला

३. 'राक के राही' एकांकी की भाषा शैली

१२.८ संदर्भ ग्रंथ

१. एकांकी - सुमन (एकांकी संग्रह) - सं. हिंदी अध्ययन मंडल, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई

*****

१३

जान से प्यारे

इकाई की रूपरेखा

१३.० इकाई का उद्देश्य

१३.१ प्रस्तावना

१३.२ 'जान से प्यारे' एकांकी की कथावस्तु

१३.३ 'जान से प्यारे' एकांकी के प्रमुख पात्र

१३.४ 'जान से प्यारे' एकांकी का संदेश

१३.५ सारांश

१३.६ लघुत्तरीय प्रश्न

१३.७ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१३.८ संदर्भ ग्रंथ

१३.० इकाई का उद्देश्य

एकांगी 'जान से प्यारे' एक यथार्थवादी एकांगी है। प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य इस एकांकी के सभी पक्षों पर विचार करना है। यह इकाई 'जान से प्यारे' एकांकी के कथ्य, पात्र, भाषा शैली व उसके संदेश पर प्रकाश डालती है।

१३.१ प्रस्तावना

एकांकी 'जान से प्यारे' ममता कालिया द्वारा लिखित यथार्थवादी एकांकी है। इस एकांकी के माध्यम से लेखिका इस बात की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करना चाहती है कि हमारे समाज के सारे रिश्ते अब स्वार्थ केन्द्रित हो चुके हैं। संतानें, बेटे-बहू, पति-पत्नी सभी स्वार्थ के आधार पर प्रेम करते हैं। ये सभी हमारी संपत्ति और रूपये-पैसे से प्यार करते हैं। स्वार्थ पूरा हो जाने के बाद ये किसी भी तरह के संबंध को कोई महत्व नहीं देते। जीते जी ये केवल प्रेम का दिखावा करते हैं। मरने के बाद इनका सारा प्रेम गायब हो जाता है। एकांकी के प्रमुख पात्र डॉ. कौशिक व उनका सहायक अविनाश एकांकी के अंत में इसी सच तक पहुंचते हैं।

१३.२ 'जान से प्यारे' एकांकी की कथावस्तु

प्रस्तुत एकांकी की शुरुआत डॉ. कौशिक के एक प्रयोग से होती है। डॉ. कौशिक जो एक वैज्ञानिक भी हैं, अपनी प्रयोगशाला में एक प्रयोग लगातार पिछले कई वर्षों से कर रहे थे। वे एक ऐसा सॉल्यूशन तैयार करने में लगे थे जिससे मृत प्राणी फिर से जीवित हो सके और एक दिन ऐसा चमत्कार हो जाता है। एक मरे हुए क्रोकोच को जब वे अपने द्वारा तैयार किए

गए सॉल्यूशन में डालते हैं तो वह उठकर चलने लगता है। अपनी इस सफलता पर डॉ. कौशिक बहुत खुश हो उठते हैं और अपनी सफलता वे अपने युवा सहयोगी अविनाश से साझा करते हैं। अविनाश पहले तो इस पर विश्वास नहीं करता पर अंतत: अनिच्छा से स्वीकार कर लेता है। डॉ. कौशिक अपनी इस सफलता से अब रूपये कमाने के बारे में सोचता है। उसे लगता है कि पुनर्जीवन देनेवाले इस घोल की मदत से वह थोड़े ही समय में बहुत अधिक धन कमा लेगा और यह सिद्ध कर देगा कि उसने मृत्यु पर विजय पा ली है। वह मृत्यु के भय व पीड़ा से कराहती मानवता के लिए जीवन संदेश लाने में सफल सिद्ध हुआ है। अपनी योजना के अनुसार वह अपना सॉल्यूशन बेचने निकलता है, उसके साथ उसका सहयोगी अविनाश भी है। ये दोनों सबसे पहले 'भावनानगर' पहुंचते हैं।

भावनानगर में एक सेठ की मृत्यु हुई है। मृत्यु के शोक में परिवार विलाप कर रहा है। उसके दोनों पुत्र भी विलाप कर रहे हैं। बहुएं भी उसे याद करके विलाप कर रहीं हैं। इस विलाप से विचलित डॉ. कौशिक सेठ के दोनों पुत्रों को बुलाते हैं और अपने चमत्कारी सॉल्यूशन के बारे में बताते हुए उनसे यह कहते है की यदि वे चाहें तो वह उनके पिता को फिर से जीवित कर सकते हैं। डॉ. कौशिक के इस प्रस्ताव को पहले तो दोनों बेटे अविश्वास की दृष्टि से देखते हैं फिर वे आपस में चर्चा करते हैं कि वसीयतनामा तो ठीक-ठाक है, लेन देन तो पिताजी ने निपटा दिया है। जब वे पाते है कि सबकुछ ठीक से निपटा दिया गया है तो बड़ा बेटा आगे आकर डॉ. कौशिक से कहता है कि डॉ. साहब आप इस सब मामले में न पड़ें। हमपर जो पड़ी है उसे हमें ही निपटाने दीजिए। इस प्रकार अप्रत्यक्ष तरीके से वे डॉक्टर को मना कर देते हैं।

उपर्युक्त घटना से निराश डॉ. कौशिक 'आस्था नगर' की ओर बढ़ते हैं। 'आस्था-नगर' में एक उम्रदराज औरत की मृत्यु हो गई है। उसकी बहू व उसका बेटा शोक मनाने का दिखावा कर रहे हैं। बहू हाथ में कई जरी की साड़ी लिए हुए खड़ी है। सभी औरतें मिलकर सलाह कर रही हैं कि उन साड़ियों में से कौन सी साड़ी मृत सास के पार्थिव शरीर पर चढ़ाया जाय, और अंत में यह निर्णय होता है कि उन साड़ियों में से जो सबसे हल्की और पुरानी जरी की साड़ी है, उसे शव पर चढ़ा दिया जाय। दूर खड़े डॉ. कौशिक यह सबकुछ देख रहे थे, इतने में मृतक का बेटा दिखाई पड़ता है। डॉ. कौशिक उसे इशारे से अपनी ओर बुलाते है और यह समझाते है कि वे अपने चमत्कारी सॉल्यूशन से उसकी मृत माँ को जीवित कर सकते हैं। युवक को इस सूचना से एक आश बंधती है और वह उत्तेजित हो उठता है किंतु इसी बीच उसकी पत्नी गिरिजा आ जाती है और जब उसे इस बात का पता चलता है तो वह डॉ. कौशिक की ओर कतरवनेपन से देखती है। गिरिजा डॉ. कौशिक को डांटते हुए कहती है कि इतनी लंबी बीमारी में तड़पने के बाद अभी तो सासू माँ चैन से सोई हैं और आप इसमें भी खलल पैदा करना चाहते हैं। इन्हें फिर से जीवितकर हम अपने लिए और स्वयं उनके लिए मुश्किल नहीं पैदा करना चाहते, आप मेहरबानी करके यहाँ से चले जाइए। इस प्रकार डॉ. कौशिक को यहाँ भी निराशा ही हाथ लगती है।

आस्था नगर से निराश डॉ. कौशिक 'मुहब्बत नगर' की ओर चल देते हैं। मुहब्बत नगर में कैप्टन शर्मा की मृत्यु 'एयर-क्रैश' से हुई है। उनकी नवयुवती विधवा सफेद कपड़ों में बैठी ऑसू बहा रही है। उसे देखकर ही डॉक्टर कौशिक को बड़ी दया आती है। डॉक्टर कौशिक उसे अपने पास बुलाते हैं और अपनी चमत्कारी दवा के बारे में बताते हैं। डॉ. शर्मा उस

विधवा नवयुवती से कहते हैं कि मैं आपके पति को नवजीवन दे सकता हूँ। डॉ. कौशिक ने इस प्रस्ताव को वह नवयुवती यह कहते हुए ठुकरा देती है कि वह धूर्त लोगों पर विश्वास नहीं कर सकती और वह अपने पति की पवित्र काया को अपवित्र नहीं करवा सकती। वह नवयुवती तमतमाकर डॉक्टर और उनके सहयोगी को भगा देती है। युवती को यह बिल्कुल अच्छा नहीं लगता कि मृत पति के बीमा के रुपयों की आश टूट जाए और वह फिर से बरहाली में लौट जाए। डॉक्टर कौशिक महबूबनगर से भी निराश होकर 'इबादत नगर' की ओर चल देते हैं। 'इबादत नगर' की बस्ती में एक मकान के बरामद में भीड़ जुटी थी। एक बहुत कम उम्र की नववधू की मृत्यु हो गई थी। उसका पति बार-बार उसका नाम लेकर दहाड़े मारकर रो रहा था। हाय कम्मो तू कहां चली गई? तुझे क्या हो गया? पति की दहाड़ों को सुनकर डॉ. कौशिक को पति के लिए सहानुभूति उमड़ आई। उन्होंने पति से कहा की आप चिंता न करें मैं आपकी पत्नी को नया जीवन देने आया हूँ। डॉ. कौशिक के इस प्रस्ताव पर कम्मो का पति आश्चर्य और चिढ़ के साथ डॉक्टर की ओर देखता है। उसे लगता है कि कहाँ यह सनकी डॉक्टर एक नई मुसीबत लेकर आ गया। फिर वह बड़ी दार्शनिक भाव भंडिमा बना लेता है और कहता है कि कम्मों एक हाड़-मांस की काया का नाम नहीं है डॉक्टर साहब बल्कि वह मेरे लिए एक जज्बात है। एक ऐसा जज्बात जो मेरी नस-नस में समाया हुआ है। वह मेरे घर के हर कोने में समायी हुई है। संक्षेप में यदि कहा जाय तो वह अप्रत्यक्ष रूप से डॉक्टर के प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं था। वह नहीं चाहता था कि कम्मो, पुर्नजीवित हो। उसने तो अखबार में अपनी दूसरी शादी को लेकर विज्ञापन देखने और मनपसंद विज्ञापनों पर निशान लगाना भी शुरू कर दिया था। डॉ. कौशिक से बात करते हुए कम्मो का पति उस अखबार से अपना मुँह ढक लेता है जिसमें उसने शादी के विज्ञापनों पर निशान लगा रखे हैं। डॉ. कौशिक इसे देखकर समझ जाते हैं कि कम्मो का पति उनके प्रस्ताव में कोई रुचि नहीं रखता और कम्मो के प्रति उसका सारा दुख दिखावटी है।

अंततः निराश होकर डॉ. कौशिक और अविनाश वहाँ से निकल लेते हैं। डॉ. कौशिक को यह समझ में आ जाता है कि दुनिया का चरित्र दिखावटी है। लोग अपने लाभ-लोभ के कारण किसी भी मृत व्यक्ति को फिर जीवित होता हुआ नहीं देख सकते। स्वार्थ से भरी इस दुनिया में निस्वार्थ प्रेम व सहृदयता लुप्त हो चुकी है। अविनाश निराश डॉ. कौशिक को समझाता है "मौत जालिम है, मगर जिन्दगी के कायदे उससे भी ज्यादा जालिम!" इस प्रकार जिंदगी की हकीकत को ज्यादा करीब से समझकर डॉ. कौशिक और अविनाश वापस लौट जाते हैं।

१३.३ 'जान से प्यारे' एकांकी के प्रमुख पात्र

डॉ. कौशिक:

डॉ. कौशिक 'जान से प्यारे' एकांकी के केन्द्रीय पात्र हैं। डॉ. कौशिक एक तेज तर्रार वैज्ञानिक हैं। अपनी मेहनत से वे एक ऐसा सॉल्यूशन बनाने में सफल हो जाते हैं जिसमें डालने से कोई भी मृत प्राणी फिर से जीवित हो जाता है। इस सफलता पर डॉ. कौशिक बड़े प्रसन्न होते हैं और उन्हें लगता है कि अब वे दुनिया के सबसे अमीर व्यक्ति बन जाएंगे। इस सॉल्यूशन में लोग मूँह मांगी कीमत चुका कर भी खरीदेंगे यद्यपि उनका सहायक इस

सॉल्यूशन की मांग को लेकर डॉ. कौशिक की तरह उत्साहित नहीं है। उसे लगता है कि जीवन और मृत्यु प्रकृति की बनायी शाश्वत व्यवस्थाएँ हैं इन्हें चुनौती नहीं देना चाहिए।

दूसरे दिन डॉ. कौशिक और अविनाश इस सॉल्यूशन को लेकर बेचने के उद्देश्य से निकलते हैं। अखबार मे शोक संदेशों से मृतकों के नाम और पते नोटकर वे उनके घरों पर पहुँचते हैं ताकि सॉल्यूशन बेचकर पैसे कमाए जा सके। 'भावनानगर' 'आस्थानगर' 'मुहब्बतनगर' 'इबादत नगर' जैसी तमाम बस्तियों में कई घरों पर ये दोनों जाते हैं। कहीं पिता की मृत्यु हुई हैं, कहीं सासू की तो कहीं पति या पत्नी की मृत्यु हुई है। सभी ऊपर–ऊपर से रो रहे हैं, शोक संतप्त होने का दिखावा कर रहे हैं पर अंदर से ये कोई भी नहीं चाहते कि उनके मृत पिता, सास, पति या पत्नी फिर से जीवित किए जायें। सभी किसी न किसी बहाने डॉ. कौशिक को टाल देते हैं या फिर डांट कर भगा देते हैं। डॉ. कौशिक समझ जाते हैं कि इस स्वार्थी दुनिया में उनके सॉल्यूशन की किसी को कोई जरूरत नहीं है। उनका सहयोगी अविनाश भी, "मौत जालिम है, मगर जिन्दगी के कायदे उससे भी ज्यादा जालिम!" कहकर इस बात को और पुष्ट करता है। इस प्रकार दुनिया के वास्तविक चरित्र को समझकर डॉ. कौशिक और अविनाश वापस लौट आते है।

१३.४ 'जान से प्यारे' एकांकी का संदेश:

"जान से प्यारे" एकांकी एक यथार्थवादी एकांकी है। इस एकांकी के माध्यम से लेखिका ममता कालिया दुनिया के वास्तविक चरित्र का उद्घाटन करती हैं। यद्यपि शोक में जालिम। डॉ. कौशिक अपने पुनर्जीवन देनेवाले फार्मूले से बड़ा उत्साहित है। उसे लगता है उसने दुनिया की सबसे बड़ी सफलता पा ली है। उसने प्रकृति पर विजय पा ली है। अब जीवन का सत्य बदल गया है। जीवन तो है पर मृत्यु अब नहीं रह गई है। मृत्यु को मैंने बदल दिया है। डॉ. कौशिक को लगता है कि उसने मृत्यु की पीड़ा और भय पर विजय प्राप्त कर लिया है। मृत्यु की पीड़ा से कराहती मानवता को वह अब और कराहने नहीं देगा। अपने इस अदभुत सॉल्यूशन से उसे बड़ी, आस बंधती है। उसे लगता है कि इस सॉल्यूशन की माँग दुनिया में तेजी से होगी और मुँह मांगे रुपयों में वह इसे बेचकर दुनिया का सबसे अमीर व्यक्ति बन जाएगा।

अपने इस सॉल्यूशन को बेचने के लिए वह अपने सहयोगी के साथ निकलता है। अखबारों के शोक संदेशों को पढ़कर वह कई मृतकों के घरों तक पहुँचता है। वह जहाँ भी पहुँचता है उसे निराशा हाथ लगती है। मृत पिता, सास, पति या पत्नी को कोई फिर से जीवित नहीं करवाना चाहता क्योंकि उनके सभी के अपने–अपने स्वार्थ हैं। बेटों को पिता की संपत्ति से प्यार है, बहू सोचती है कि सास मर गई चलो अच्छा हुआ अब उसकी तिमयदाती नहीं करनी पड़ेगी। पत्नी, पति से ज्यादा उसके मृत्यु के बाद मिलने वाले बीमा के पैसों से प्यार करती है और मृतक पत्नी का पति दूसरी पत्नी को खोज रहा है ताकि अपनी जिंदगी फिर से आबाद कर सके। इस प्रकार कोई भी यह नहीं चाहता था कि उनके मृत संबंधी या परिवार जन फिर से जीवित हो, और हर जगह से डॉ. कौशिक व अविनाश निराश होकर लौटते हैं। अपने कथ्य के द्वारा यह एकांकी इसी संदेश को देता है कि यह दुनिया स्वार्थी है। हर संबंध जीवित रहते ही मायने रखते हैं। मृत्यु के बाद सारे संबंध अर्थहीन हो जाते हैं।

स्वार्थी दुनिया के कायदों के आगे मृत्यु की भयावहता भी कमजोर पड़ जाती है। लालच और स्वार्थ के प्रवाह में पड़कर सारे संबंध व सारी आत्मीयता नष्ट हो जाती है।

१३.५ सारांश

'जान से प्यारे' एकांकी में डॉ. कौशिक एक वैज्ञानिक है और एक सॉल्युशन तैयार करता है। यह सॉल्युशन लेकर समाज के बीच पहुँचकर काफी रुपये कमाने का मकसद होता है परंतु उसे समाज स्वीकार नहीं करता है। अपने लोभ-लाभ के कारण मृत व्यक्ति को जीवित होता हुआ समाज नहीं देखना चाहता है। समाज का यह चरित्र एक प्रकार का दिखावटी चरित्र की तरह दिखाई देता है। उसे इस एकांकी के माध्यम से ममता कालिया जी ने प्रस्तुत किया है।

१३.६ लघुत्तरीय प्रश्न

१. 'जान से प्यारे' एकांकी के लेखक कौन है?

उ - ममता कालिया।

२. डॉ. कौशिक सर्वप्रथम सॉल्युशन का प्रयोग किस पर करते है?

उ - डॉ. कौशिक सर्वप्रथम सॉल्युशन का प्रयोग एक मरे हुए क्रोकोच पर करते है।

३. डॉ. कौशिक सहयोगी के साथ सबसे पहले सॉल्युशन लेकर किस नगर में पहुँचते है?

उ - भावनानगर में।

१३.७ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१. 'जान से प्यारे' एकांकी में आई अलग–अलग बस्तियों के नामों के आधार पर उन बस्तियों में मृतकों के घर पर होनेवाले व्यवहारों पर प्रकाश डालिए।

२. 'जान से प्यारे' एकांकी के कथ्य पर प्रकाश डालते हुए, एकांकी के संदेश को समझाइए।

३. 'मौत जालिम है, मगर जिन्दगी के कायदे उससे भी ज्यादा जालिम।' इस कथन के आधार पर 'जान से प्यारे' एकांकी के कथावस्तु का विश्लेषण कीजिए।

१३.८ संदर्भ ग्रंथ

१. एकांकी - सुमन (एकांकी संग्रह) - सं. हिंदी अध्ययन मंडल, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई

*****

munotes.in

१४

अन्वेषक

इकाई की रूपरेखा

१४.० इकाई का उद्देश्य
१४.१ प्रस्तावना
१४.२ 'अन्वेषक' एकांकी की कथावस्तु
१४.३ 'अन्वेषक' एकांकी के महत्वपूर्ण पात्र
१४.४ सारांश
१४.५ लघुत्तरीय प्रश्न
१४.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न
१४.७ संदर्भ ग्रंथ

१४.० इकाई का उद्देश्य

यह इकाई प्रताप सहगल द्वारा लिखित एकांकी 'अन्वेषक' पर आधारित है। इस इकाई के माध्यम से 'अन्वेषक' के सभी पक्षों पर संतुलित ढंग से विचार किया गया है।

१४.१ प्रस्तावना

प्रताप सहगल द्वारा लिखित एकांकी 'अन्वेषक' की पृष्ठभुमि ऐतिहासिक है। इस एकांकी में गुप्तकाल में हुए असाधारण प्रतिभा संपन्न आचार्य आर्यभट के जीवन व उनके संघर्षों व विरोधों पर प्रकाश डाला गया है। आचार्य आर्यभट ने पूरी दुनिया को कई महत्वपूर्ण सत्यों से परिचित कराया। शून्य व दशमलव जैसी गणितीय संकल्पनाओं के साथ–साथ आचार्य आर्यभट ने पूरी दुनिया को यह बताया कि पृथ्वी अपने अक्ष पर घूमते हुए सूर्य की परिक्रमा करती है। इसी परिक्रमा के परिणाम स्वरूप दिन व रात होते हैं। उन्होंने यह भी बताया कि सूर्यग्रहण व चन्द्रग्रहण एक खगोलीय परिघटना है। इसके पीछे सूर्य–चंद्र व पृथ्वी की गतियाँ की भूमिका है। यह किसी दैवीय कृपा या कोप का परिणाम नहीं है। आचार्य आर्यभट एक सच्चे अन्वेषक से अपने अन्वेषण व उसकी स्थापनाओं को समाज के समक्ष रखने पर उन्हें चूड़ामणि व चिंतामणि जैसे आचार्यों का विरोध भी झेलना पड़ा पर वे सारे विरोधों को झेलते हुए सत्य के साथ साहस के साथ खड़े रहे।

१४.२ 'अन्वेषक' एकांकी की कथावस्तु

'अन्वेषक' एकांकी में गुप्तकालीन आचार्य आर्यभट के जीवन व उससे जुड़ी घटनाओं का सुंदर वर्णन किया गया है। एकांकी की पृष्ठभुमि गुप्तकाल की है। गुप्तकाल के क्षीणकाल में जब सम्राट बुधगुप्त गुप्त साम्राज्य की बागडोर संभाल रहे थे उसी समय पाटलिपुत्र में उच्च मनीषा संपन्न आचार्य आर्यभट अपने महत्वपूर्ण खगोल शास्त्रीय अध्ययन में लगे थे।

आचार्य आर्यभट की कीर्ति तब तक समाज में सुविख्यात हो चुकी थी। शून्य व दशमलव जैसी गणितीय संकल्पना व उसके संयोग की वैज्ञानिकता ने आचार्य आर्यभट की प्रतिभा व उच्च मेधा की झलक गुप्त साम्राज्य के विद्वत समाज को दिखा दी थी। सम्राट बुधगुप्त समेत साम्राज्य में उनके अनेक प्रशंसक व विरोधी पैदा हो चुके थे। जहाँ एक ओर वैज्ञानिक दृष्टि रखनेवाले विवेकवान लोग आचार्य के प्रशंसक थे। वहीं दूसरी तरफ चूड़ामणि व चिन्तामणि जैसे परंपरावादी व लालची विद्वान आचार्य के घोर निंदक व विरोधी भी बन चुके थे।

आचार्य आर्यभट की उच्च प्रतिभा व मेधा से प्रभावित सम्राट बुधगुप्त उन्हें नालंदा विश्वविद्यालय में कुलपति पद को स्वीकार करने का प्रस्ताव देते हैं परंतु पद लोलुपता से सर्वथा दूर व अपने अन्वेषण में निरंतर लगे आचार्य इस प्रस्ताव को विन्रमता से अस्वीकार कर देते हैं। आचार्य आर्यभट निरंतर अपने अध्ययन व अन्वेषण में लगे रहते हैं। रात–रात भर जगकर वे अपने वेधशाला में नक्षत्रों का अध्ययन करते हैं और अंतत: इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि परंपरागत अवधारणाएं जो पृथ्वी की स्थिरता से व सूर्य तथा चन्द्रग्रहण से जुड़ी हैं वे गलत हैं। वे सिद्ध करते हैं कि पृथ्वी स्थिर नहीं है। अन्य खगोलीय पिडों की तरह वह भी गतिमान है। पृथ्वी अपने अक्ष पर भी घूमती है और अपने अक्ष पर घूमते हुए वह सूर्य की भी परिक्रमा करती है। अपने अक्ष पर घूमते हुए वह २३ घंटे ५६ पल और ४.१ क्षण का समय लेकर पूर्व की ओर का एक चक्कर पूरा करती है। इस प्रकार वह वर्ष भर में ३६५ चक्कर लगाती हैं। ठीक इसी तरह वे सूर्यग्रहण व चन्द्रग्रहण से संबंधित मान्यताओं को खारिज़ करते हुए एक नई वैज्ञानिक स्थापना देते है। आचार्य कहते है कि सूर्यग्रहण व चन्द्रग्रहण किसी दैवीय कृपा या कोप के कारण नहीं होते बल्कि वे खगोलीय स्थितियों व गतियों के कारण होते हैं।

आचार्य की इन वैज्ञानिक स्थापनाओं को तत्कालीन परंपरावादी व लालची विद्वत समाज स्वीकार नहीं कर पाता है। चूड़ामणि व चिंतामणि जैसे आचार्य इसी परंपरावादी व लोलुप विद्वत समाज के प्रतिनिधि हैं। वे जानते थे कि यदि आचार्य आर्यभट की स्थापनाएं स्वीकृत हो जाती हैं तो जनता वास्तविकता जान जाएगी और धर्म के नाम पर जो दान–धर्म की परंपराएं चल रही हैं वे बंद हो जायेंगी। व्यक्तिगत रूप से भी वे आचार्य आर्यभट की मनीषा व प्रसिद्धि से इर्ष्या करते थे। इसीलिए वे राजदरबार में सम्राट बुधगुप्त के सामने आचार्य आर्यभट की स्थापनाओं का विरोध करते हैं। उन्हें अतार्किक व मिथ्या ज्ञान का प्रचारक कहते हैं। वेद व ऋषि परंपरा का विरोधी बताते हैं। किंतु आचार्य के वैज्ञानिक तर्कों व प्रमाणों को वे काट नहीं पाते। आचार्य के अनेक सिद्धांतो को सम्राट बुधगुप्त उनके शिष्यों के द्वारा अच्छी तरह समझ लेते हैं और अपनी सहज प्रज्ञा से समझ जाते हैं कि आचार्य की स्थापनाएं पूरी तरह वैज्ञानिक व मौलिक हैं। सम्राट आचार्य की इन महत्वपूर्ण स्थापनाओं के ग्रंथ आर्यभटीय को व्यापक रूप से प्रचारित-प्रसारित करने का आदेश देते हैं ताकि ज्ञान की इस नयी दृष्टि से जनता परिचित हो सके और गुप्त साम्राज्य की शैक्षणिक व सांस्कृतिक दृष्टि विरासत आगे बढ़ती रहे। इस प्रकार अन्वेषण एकांकी के माध्यम से प्रताप सहगल आचार्य आर्यभट के अन्वेषक चरित्र व उनके जीवनसंघर्ष का उद्घाटन करते हुए यह बताने की कोशिश करते हैं कि हर सच्चे अन्वेषक के रास्ते सरल नहीं होते। अन्वेषण के परिश्रम के साथ–साथ उन्हें सत्य की स्थापना के लिए विरोध झेलने व संघर्ष करने के लिए भी तैयार रहना चाहिए।

१४.३ 'अन्वेषक' एकांकी के महत्वपूर्ण पात्र

आचार्य आर्यभट:

'अन्वेषक' एकांकी के कई पात्रों में आचार्य आर्यभट का चरित्र केन्द्रीय चरित्र है। आचार्य आर्यभट गुप्त सामाज्र्य के क्षीणकाल में हुए। उस समय गुप्त साम्राज्य के सम्राट बुधगुप्त थे और पाटलिपुत्र उनकी राजधानी थी। आचार्य आर्यभट अद्भुत प्रतिभा के धनी थे। केवल २३ वर्ष की आयु में ही आचार्य आर्यभट शून्य व दशमलव के प्रयोग व महत्व को बड़ी आसानी से लोगों को समझा देते हैं। उनकी प्रतिभा से प्रभावित होकर सम्राट बुधगुप्त उन्हें नालंदा विश्वविद्यालय का कुलपति बनाना चाहते थे किंतु आचार्य विनम्रता पूर्वक इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर देते हैं क्योंकि इससे उनके अन्वेषण कार्य में बाधा पड़ती।

आचार्य आर्यभट निरंतर अपने अन्वेषणो में लगे रहे। निरंतर नक्षत्रों का अध्ययन रात–रातभर जागकर करते रहे और अंतत: उन्होंने कई महत्वपूर्ण खगोलीय स्थापनाओं को स्थापित किया। आचार्य ने सबसे पहले यह सिद्ध किया कि पृथ्वी स्थिर नहीं है बल्कि वह भी अन्य खगोलीय पिंडों की तरह गतिशील है। पृथ्वी अपने अक्ष पर घूमते हुए सूर्य की परिक्रमा करती है। पृथ्वी पश्चिम से पूर्व की ओर गति करती है। और इस तरह से उसे एक चक्कर लगाने में २३ घंटे ५६ पल और ४.१ क्षण लगते हैं। पृथ्वी एक वर्ष में इस प्रकार के ३६५ चक्कर लगाती है। आचार्य ने यह भी सिद्ध किया कि सूर्य व चन्द्रग्रहण किसी दैवीय इच्छा का परिणाम नहीं है बल्कि वे पूरी तरह से खगोलीय गति व स्थिति के परिणाम हैं। आचार्य की इन स्थापनाओं को यथास्थितिवादियों ने चुनौती दी और बलपूर्वक उसका विरोध किया। चूड़ामणि व चिंतामणि जैसे आचार्य इसी प्रकार के लालची व विवेकभ्रष्ट आचार्य थे। ये दोनों आचार्य की स्थापनाओं का विरोध करते हुए उन्हें मिथ्या ज्ञान का प्रचारक बताते हैं। इस सारे विरोध का आचार्य शांतिपूर्वक उत्तर देते हैं। अंतत: सम्राट बुधगुप्त इस बात को समझ लेते है कि आचार्य आर्यभट की स्थापनाएं सत्य व वैज्ञानिक हैं और वे सारे आक्षेपों व विरोधों का समझकर आर्यभटीय के महत्व को स्वीकार करते हुए उसके व्यापक प्रचार–प्रसार का आदेश देते हैं। इस प्रकार आचार्य आर्यभट का चरित्र हर सच्चे अन्वेषक के लिए एक आदर्श चरित्र है।

चूड़ामणि व चिंतामणि:

चूड़ामणि व चिंतामणि आचार्य आर्यभट के विरोधी व निंदक है। ये दोनों लोलूप व यथास्थितिवादी आचार्य हैं। आचार्य आर्यभट की मेधा व उनकी कीर्ति से जलते हैं। इन्हें तब और भी जलन होती है जब ये इस बात से परिचित होते है कि आचार्य आर्यभट को नालंदा विश्वविद्यालय का कुलपति सम्राट बुधगुप्त बनाना चाहते थे किंतु आचार्य ने विनम्रतापूर्वक मना कर दिया।

चूड़ामणि और चिंतामणि आचार्य की खगोलीय स्थापना का भी राजदरबार में विरोध करते हैं और आचार्य की पृथ्वी के अपने अक्ष पर व सूर्य के परिक्रमा के सिद्धांत को चुनौती देते हुए उन्हें मिथ्या ज्ञान का प्रचारक बताते हैं। किंतु आचार्य के तर्को का वे वैज्ञानिक रूप से खंडन नहीं कर पाते। अंतत: सम्राट बुधगुप्त समझ जाते हैं कि आचार्य आर्यभट सत्य का उद्घाटन कर रहे हैं जबकि चूड़ामणि व चिंतामणि असत्य व लोलुपता का दामन थामें हुए है

और वे आचार्य की प्रशंसा करते हुए आर्यभटीय के व्यापक प्रचार–प्रसार का आदेश देते हैं ताकि जनता में सत्य की प्रतिष्ठा हो सके।

१४.४ सारांश

प्रस्तुत एकांकी 'अन्वेषक' में लेखक प्रताप सहगल ने आचार्य आर्यभट के वैज्ञानिक दृष्टि को प्रस्तुत किया है। शुन्य व दशमलव जैसी गणितीय संकल्पना को समाज के सामने रखकर उसके महत्व को दर्शाया है। साथ ही सूर्यग्रहण और चंद्रग्रहण को भी वैज्ञानिक तौर पर प्रस्तुत किया है।

१४.५ लघुत्तरीय प्रश्न

१. सम्राट बुधगुप्त आचार्य आर्यभट को कौनसा प्रस्ताव देता है?

उ - सम्राट बुधगुप्त आचार्य आर्यभट को नालंदा विश्वविद्यालय में कुलपति पद स्वीकार करने का प्रस्ताव देता है।

२. आचार्य आर्यभट ने सूर्यग्रहण और चंद्रग्रहण को क्या बताया है?

उ - आचार्य आर्यभट ने सूर्यग्रहण और चंद्रग्रहण को एक खगोलिय परिघटना बताया है।

३. आचार्य आर्यभट के घोर निंदक और विरोधी कौन थे?

उ - चुड़ामणि और चिंतामणि जैसे परम्परावादी लालची विद्वान आचार्य आर्यभट के घोर निंदक और विरोधी थे।

१४.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१. 'अन्वेषक' एकांकी के आधार पर आचार्य आर्यभट के जीवनसंघर्ष पर प्रकाश डालिए।

२. 'अन्वेषक' एकांकी के कथ्य पर प्रकाश डालते हुए उसके संदेश को समझाइए।

३. 'अन्वेषक' एकांकी के आधार पर चूड़ामणि व चिंतामणि का चरित्र चित्रण कीजिए।

१४.७ संदर्भ ग्रंथ

१. एकांकी - सुमन (एकांकी संग्रह) - सं. हिंदी अध्ययन मंडल, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई

*****

१५

नो एडमिशन

इकाई की रूपरेखा

१५.० इकाई का उद्देश्य
१५.१ प्रस्तावना
१५.२ 'नो एडमिशन' एकांकी की कथावस्तु
१५.३ 'नो एडमिशन' एकांकी के प्रमुख पात्र
१५.४ सारांश
१५.५ लघुत्तरीय प्रश्न
१५.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न
१५.७ संदर्भ ग्रंथ

१५.० इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई संजीव निगम द्वारा लिखित एकांकी 'नो एडमिशन' पर आधारित है। इस इकाई में एकांकी के सभी पक्षों पर विचार किया गया है और कोशिश की गई है कि एकांकी के कथ्य व उद्देश्य को सरल भाषा में विद्यार्थियों तक पहुंचाया जा सके।

१५.१ प्रस्तावना

संजीव निगम द्वारा लिखित 'नो एडमिशन' एक यथार्थवादी एकांकी है। इस एकांकी में संजीव निगम भारतीय शिक्षा व्यवस्था की पोल खोलते हुए शिक्षा के बाजारीकरण पर रोशनी डालते हैं। एकांकी दिखाता है कि किस तरह आज स्कूल एडमिशन के नाम पर तरह–तरह की गड़बड़ीयाँ कर रहे हैं और अभिभावकों के मन में एडमिशन के भय को पैदा कर उससे पैसे बना रहे हैं। जैसे एडमिशन के नाम पर माता–पिता को लुटा जा रहा है और कैसे पैसे लेकर एडमिशन दिया जा रहा है। एडमिशन की पूरी प्रक्रिया एक भयंकर त्रासदायक स्थिति का निर्माण अभिभावकों व बच्चों के लिए कर रही है। आज शिक्षा व्यवस्था बाजार की शक्तियों के हाथों में है और उन्होंने इसे केवल धन कमाने का माध्यम बना लिया है।

१५.२ 'नो एडमिशन' एकांकी की कथावस्तु

संजीव निगम द्वारा लिखित एकांकी 'नो एडमिशन' एक यथार्थवादी एकांकी है। यह एकांकी शिक्षा के बाजारीकरण पर प्रकाश डालती है। रेखा और विनीत अपने बेटे सोनू का एडमिशन एक 'हाई–फाई' पब्लिक स्कूल में करवाना चाहते थे। इसके लिए विनीत रात से ही लाईन में लग जाता है। बहुत मेहनत करने के बाद जब सुबह जाते एडमिशन फ़ार्म मिल जाता है तो उसे ऐसा लगता है कि उसने एक बहुत बड़ी लड़ाई जीत की है। घर लौटते हुए

munotes.in

वह एडमिशन फ़ार्म के साथ-साथ जनरल साइंस व जनरल नॉलेज की दो किताबें भी साथ ले आता है ताकि स्कूल के साक्षात्कार के लिए पति-पत्नी अच्छी तरह से तैयारी कर सकें। जिस दिन बच्चे के एडमिशन के लिए साक्षात्कार होना है वे दोनों अच्छी तरह से तैयार होकर स्कूल जाते हैं। स्कूल की प्रिंसिपल उनसे तरह-तरह के प्रश्न पूछती है और इस बात पर जोर देती है की उनके पास अपनी कार होनी चाहिए। वे कार खरीद कर उसके कागजात स्कूल में जमा करा दें तभी उनके बेटे का एडमिशन हो पायेगा। बिना कारवाले अभिभावकों के कारण स्कूल का स्तर गिरता है। वे रेखा और विनीत से पोयम सुनाने के लिए कहती है। जब ये हिंदी कविता सुनते हैं तो वे बिगड़ उठती हैं और डांटते हुए बगल के कमरे में जाकर इंग्लिश पोयम याद कर उसे फिर से सुनाने का फरमान जारी करती हैं।

इसी बीच लाला बनारसी दास आ धमकते हैं। लाला बिना इजाजत लिए ही प्रिंसिपल की केबिन में आ धमके थे और आते ही अपने फैक्ट्रियों, सुपरस्टोरों बंगलों व गाड़ियों का ब्यौरा प्रिंसिपल को देने लगते हैं। पहले तो प्रिंसिपल को लाला का व्यवहार अटपटा व भद्दा लगता है किंतु जैसे ही वह एडमिशन की एवज में पांच लाख रूपये के चेक देने की बात करता है तो प्रिंसिपल का रवैया एकदम से बदल जाता है। अभी तक जो प्रिंसिपल लाला पर बिगड़ रही थी वह लाला से हँस-हँसकर बात करने लगती है और लाला को आश्वस्त करती है की उसके पोते लल्लू को ही स्कूल की एक मात्र खाली सीट पर एडमिशन मिलेगा। लल्लू अब लाला का लल्लू नहीं रह गया था वह अब स्कूल का भी लल्लू हो गया था।

दूसरी तरफ अब तक आस लगाए रेखा व विनीत को वह मना कर देती है और अगले वर्ष सारी पोयम्स याद करके आने के लिए कहती है। इस प्रकार मध्यम वर्ग के अभिभावक पैसों की खनक के चलते अपने बच्चे के एडमिशन से वंचित कर दिए जाते है और लाला बनारसीदास जैसे धनपति बड़ी आसानी से बाजी मार ले जाते हैं।

इस प्रकार एकांकी बताता है कि किस प्रकार आज सूची शिक्षा व्यवस्था बाजार केन्द्रित हो चुकी है। आम आदमी और उसकी मजबूरियाँ शिक्षा व्यवस्था के लिए कोई मायने नहीं रखतीं।

१५.३ 'नो एडमिशन' एकांकी के प्रमुख पात्र

रेखा व विनीत:

रेखा व विनीत 'नो एडमिशन' एकांकी के केन्द्रीय पात्र हैं। मध्यम वर्गीय परिवार के प्रतिनिधि पात्र के रूप में भी इन दोनों को देखा जा सकता है। अपने बेटे के एडमिशन की चिंता इन्हें निरंतर परेशान करती रहती है। शहर के हाई–फाई स्कूल में एडमिशन करने के लिए विनीत रात से ही स्कूल में जाकर लाईन लगाता है। एडमिशन फ़ार्म मिल जाने पर दोनों को बड़ी खुशी होती हैं। दोनों मिलकर रात दिन इंटरव्यू की तैयारी करते हैं। इंटरव्यू के दिन दोनों समय से प्रिंसिपल के केबिन में पहुँच जाते हैं और प्रिंसिपल के अनाप–शनाप प्रश्नों का सामना करते हैं। प्रिंसिपल सामान्य ज्ञान के नाम पर अनेक बेतुके प्रश्न करती है और अंतत: पोयम सुनाने के लिए कहती है। जब ये दोनों पोयम की जगह हिंदी कविता सुनाते है तब प्रिंसिपल बिगड़ जाती हैं और इन्हें इंग्लिश पोयम याद करने का आदेश देती हैं। इसी बीच

लाला बनारसीदास अपने नाती लल्लू के एडमिशन के लिए आ जाते है और पांच लाख रूपये का चेक देकर एकमात्र बची सीट खरीद लेते हैं । पांच लाख का चेक देखते ही प्रिंसिपल अपनी भूमिका बदल देती हैं । वे लाला बनारसीदास से कोई प्रश्न नहीं करतीं । लाला का लल्लू स्कूल का लल्लू बन जाता है । रेखा और विनीत इस सौदे का विरोध करते हैं पर प्रिंसिपल के आगे उनकी एक भी नहीं चलती । प्रिंसिपल अगले वर्ष और भी ज्यादा तैयारी करके आने के लिए कहकर रेखा और विनीत को चलता कर देती हैं ।

लाला बनारसीदास:

लाला बनारसीदास एकांकी के एक और महत्वपूर्ण पात्र हैं । लाला को अमीर वर्ग का प्रतिनिधि पात्र भी माना जा सकता है । लाला अपने पोते लल्लू के एडमिशन के लिए आते हैं । वे प्रिंसिपल की केबिन में बिना किसी इजाजत में ही आ जाते हैं और आते ही अपनी फैक्ट्रियों, सुपर स्टोरों बंगलो व कारों के बारे में प्रिंसिपल को बताता है । वह अपने पोते के एडमिशन लिए पांच लाख का चेक भी लेकर आया है । पहले प्रिंसिपल को उसके व्यवहार से चिढ़ होती है पर जब पांच लाख का चेक देखती है तब उसका व्यवहार बदल जाता है । वह लाला से कोई प्रश्न नहीं पूछती, लाला का कोई इंटरव्यू नहीं होता । दूसरे अभिभावकों से सीधे मुँह बात न करनेवाली प्रिंसिपल लाला से हँस–हँसकर बात करने लगती है । इस प्रकार लाला पैसे देकर प्रिंसिपल को अपने पोते लल्लू के लिए एडमिशन खरीद लेता है और बेचारे रेखा व विनीत इस अन्याय को देखते रह जाते है ।

१५.४ सारांश

'नो एड्मिशन' एकांकी में मध्यम वर्गीय परिवार के पात्र रेखा और विनीत बेटे का एडमिशन हाई-फाई पब्लिक स्कुल में करवाना चाहते है परंतु मध्यम वर्गीय परिवार शिक्षा के बाजारीकरण से बेटे का एडमिशन नहीं ले पाते है। दूसरी तरफ जिसके पास धन की कमी नहीं अर्थात उच्चवर्गीय व्यक्ति को तुरंत एडमिशन मिल जाता है। इस भेद को एकांकी के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

१५.५ लघुत्तरीय प्रश्न

१. 'नो एडमिशन' एकांकी में स्कुल के एडमिशन की एकमात्र सीट कौन खरीद लेता है?

उ - लाला बनारसीदास।

२. 'नो एडमिशन' एकांकी में किस प्रकार की व्यवस्था को प्रस्तुत किया है?

उ - 'नो एडमिशन' एकांकी शिक्षा व्यवस्था के बाजारीकरण को प्रस्तुत करती है।

३. 'नो एडमिशन' एकांकी में निम्नमध्यम वर्गीय के पात्र कौनसे है?

उ - रेखा और विनीत।

४. रेखा और विनीत सोनू का एडमिशन कहाँ करवाना चाहते है?

उ - रेखा और विनीत सोनू का एडमिशन हाई-फाई पब्लिक स्कुल में करवाना चाहते है।

१५.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१. 'नो एडमिशन' एकांकी के आधार पर मध्यमवर्गीय परिवार द्वारा एडमिशन के लिए उठाए जानेवाले कष्टों पर रोशनी डालीए।

२. रेखा व राकेश एडमिशन के लिए किन–किन स्थितियों से होकर गुजरते हैं? एकांकी के आधार पर स्पष्ट कीजिए।

३. 'नो एडमिशन' एकांकी के आधार पर प्रिंसिपल का चरित्र–चित्रण कीजिए।

४. 'नो एडमिशन' एकांकी के आधार पर लाला बनारसीदास का चरित्र–चित्रण कीजिए।

१५.७ संदर्भ ग्रंथ

१. एकांकी - सुमन (एकांकी संग्रह) - सं. हिंदी अध्ययन मंडल, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई

*****

munotes.in